फैकल्टी ऑफ आर्ट्स, दिल्ली विश्वविद्यालय

के तत्वावधान मे

फ़ारसी साहित्य और चिन्तन के विभिन्न पक्षो पर

ईरान के भारतस्थित राजदूत

हिज़ एक्सलेन्सी डॉ० अली असग़र हिक्मत

द्वारा दिये गये

सात व्याख्यानों का संकलन

व्याख्यान-काल : ८ दिसंबर १९५४—२ मार्च १९५५
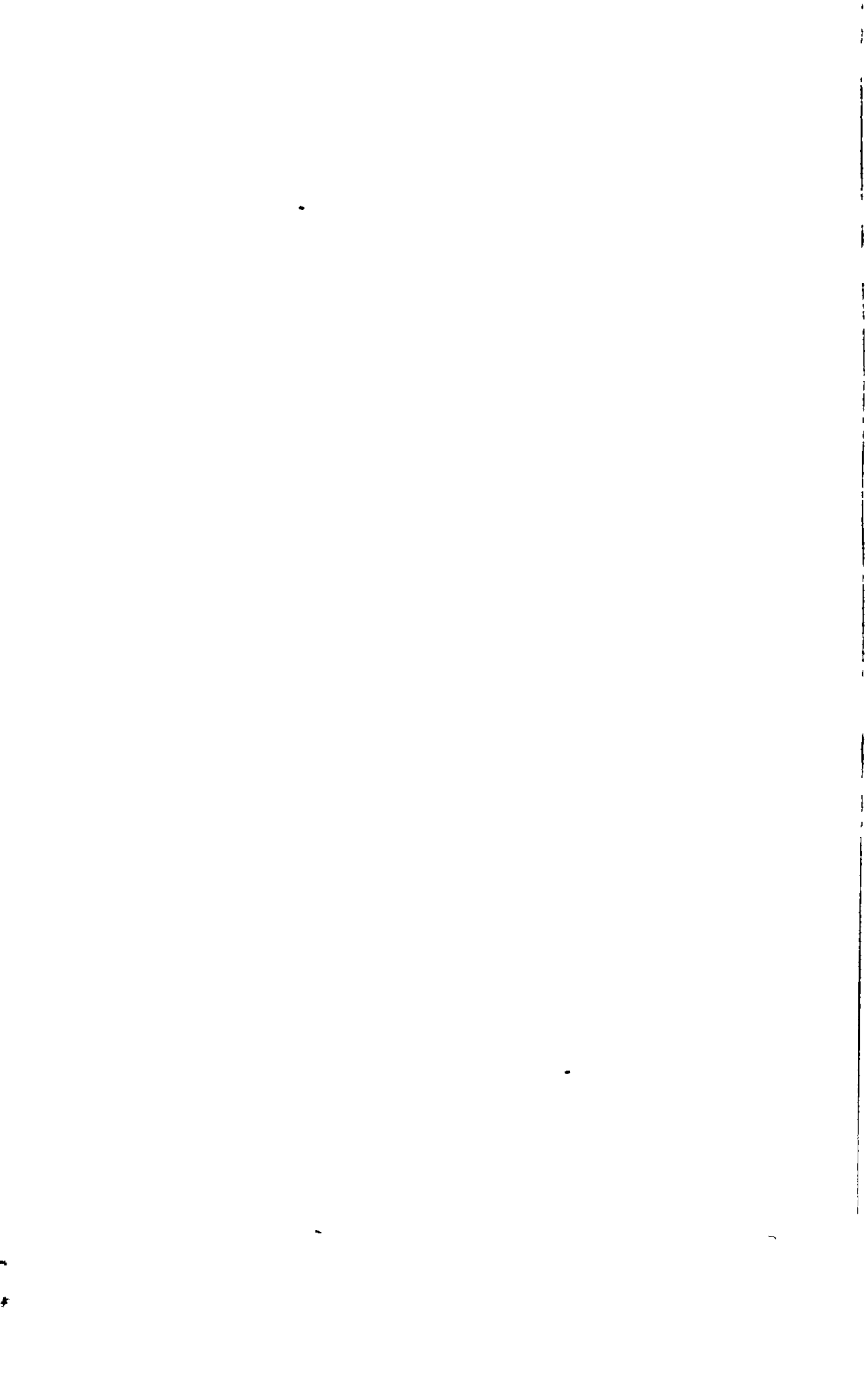
समर्पण

फारसी दर्शन, कविता और साहित्य से मुझे

परिचित करने का श्रेय मेरे

पूजनीय पिता

स्वर्गीय डॉ० दौलतराम जी चोपड़ा

एम० बी०, बी० एस० (यू० एन० ए०)

(जन्म १२ जुलाई, १८८० / मृत्यु . ६ दिसम्बर, १९५४)

भूतपूर्व उपप्रधान म्युनिसिपल कमेटी।

हाफिजाबाद, (जिला गुजरांवाला) पश्चिम पंजाब

को

है। वह वैज्ञानिक होते हुए भी उर्दू-फारसी के

दिग्गज पंडित और कवि थे, इसलिये

यह अपनी तुच्छ कृति

उनकी पुण्य स्मृति

में समर्पित

करता

हूँ।

—हीरालाल चोपड़ा
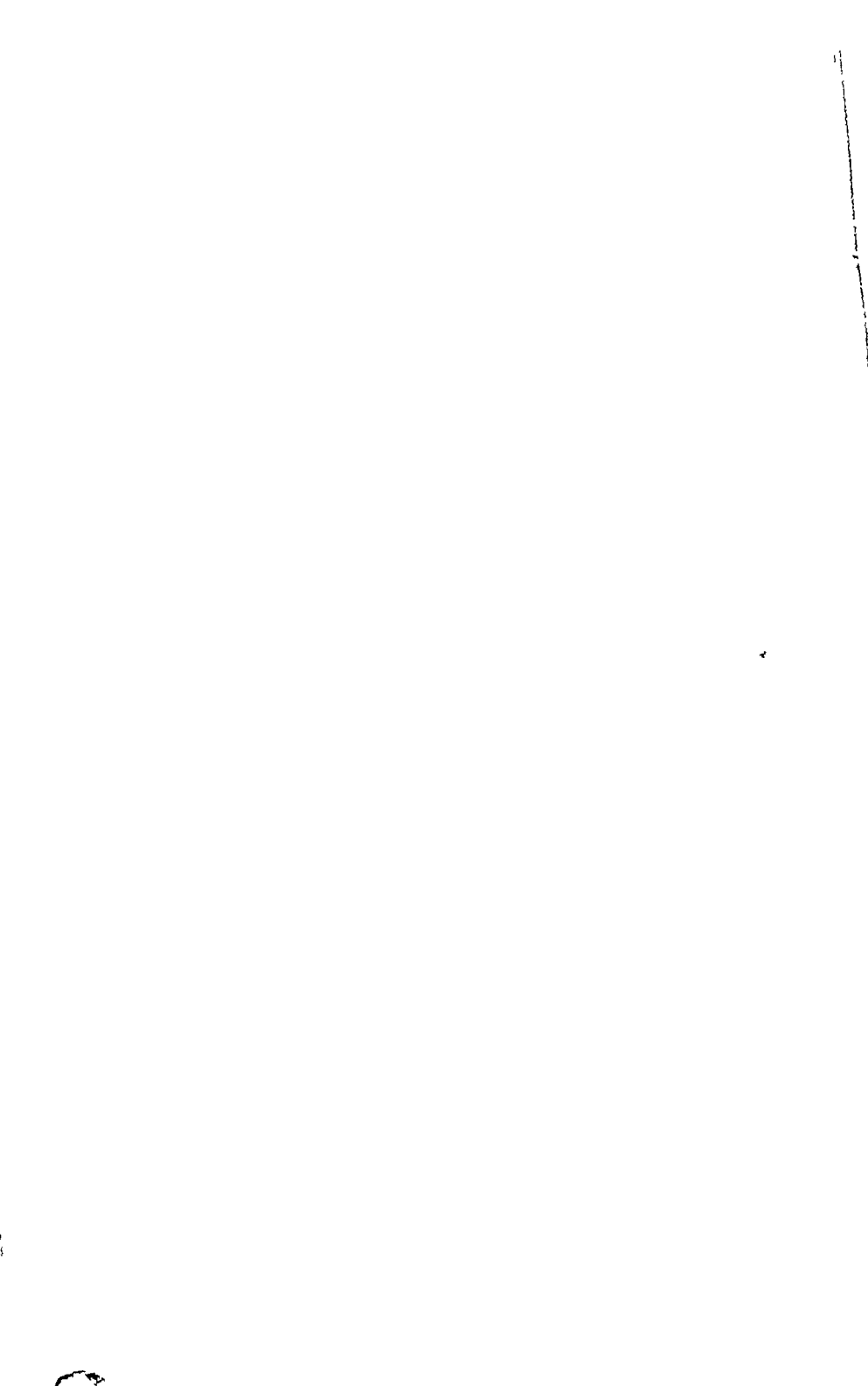
धन्यवाद

दिल्ली विश्वविद्यालय के भूतपूर्व उप-कुलपति श्री जी० एस० महाजनी को हार्दिक धन्यवाद है कि उन्होने ईरानी साहित्य के प्रसारार्थ १९५४-५५ में आर्ट्स फैकल्टी की अध्यक्षता में दिये गये इन भाषणो के हिन्दी-अनुवाद की आज्ञा प्रदान की। मैं माननीय डॉक्टर हिकमत का विशेष आभारी हूँ जिन्होने इस आज्ञा-प्रदान मे योग दिया। उनके इन भाषणो से भारत-ईरान का सास्कृतिक सम्बन्ध और भी घनिष्ट हो गया है। वह जीवन भर साहित्य-सेवी रहे हैं और भारत की सस्कृति के प्रति उनकी श्रद्धा भारतवासियो के लिये मान और प्रतिष्ठा का कारण है।

डॉ० मुहम्मद इसहाक, मन्त्री—ईरान सोसाइटी कलकत्ता, प्राध्यापक कलकत्ता विश्वविद्यालय, भी मेरे धन्यवाद के पात्र है कि उन्होने भाषणो के अङ्गरेजी मुद्रण में जो सशोधन किये है उन्हे हिन्दी सस्करण में प्रयुक्त करने के लिये भी निस्सकोच अनुमति दे दी। साथ ही मैं श्री इन्दुकान्त जी शुक्ल का आभारी हूँ, जिन्होने पुस्तक के अनुवाद-कार्य मे मेरी सहायता की।

श्रीकृष्णचन्द्र बेरी 'अध्यक्ष हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी' जो प्रकाशक होने के अतिरिक्त एक उत्साही साहित्यिक भी है और किशोरावस्था से ही हिन्दी भाषा के प्रसार-कार्य मे तत्पर है, मेरे

विशेष धन्यवाद के पात्र है कि आपने कई व्याघातो के होते हुए भी इस पुस्तक के प्रकाशन में मेरा हाथ बँटाया।

—हीरालाल चोपड़ा

प्रो० हीरालाल चोपड़ा ● डॉ० अलीअसगर हिकमत

परिचय

डॉ० अली असग़र हिक्मत

भारत सरकार ने स्वाधीनता सग्राम के [illegible] विशिष्टताओ को एक सुनिश्चित एव स्मृतिकार्य [illegible] भारतीय स्वातत्र्य सग्राम के इतिहास को सर्पादित [illegible] बडी सावधानी तथा गभीरता के साथ प्रारम्भ किया है। [illegible] इसमें कुछ ऐसे व्यक्ति भी है जिन्होने इस [illegible] समर्पित कर दिया ।

प्रस्तावित सलग्नशील शलभो में एक [illegible] ([illegible]) श्री अबाप्रसाद थे जो क्रातिकारी स्वाधीनता सग्राम के [illegible] एव अग्रणी योद्धाओ तथा लोकमान्य तिलक के अनुगामियो में से थे। उपर्युक्त क्षेत्र के ही विप्लवी कार्यकर्त्ता लाला हरदयाल एम० ए०, भाई परमानन्द एम० ए०, सरदार अजीत सिंह, सूफी अबा प्रसाद थे।

प्रथम महायुद्ध में इग्लैण्ड से जरमनी के विरोध का लाभ उठाते हुए इन लोगों में से अधिकाश ने यही समुचित समझा कि स्वदेश को अतिरिक्त रखकर अन्यान्य देशो मे ऐसे विप्लवी प्रतिष्ठान स्थापित किए जायें जहाँ से भारतीय स्वाधीनता सग्राम के लिए अधिकाधिक प्रयत्नशील हुआ जा सके । लाला हरदयाल

अमेरिका चले गए, राजा महेन्द्रप्रताप[1] अफगानिस्तान, तुर्की और रूस की ओर प्रस्थित हुए। भाई परमानन्द आंग्लनिर्वासनानुसार अंडेमान भेजे गए। परतु सरदार अजीतसिह और अहब्रह्मास्मिवादी सूफी अवाप्रसाद ईरान भेजे गये। ईरान में शीराज़ (स्थानविशेष) को साहित्यिक एवं सास्कृतिक दृष्टि से वही महत्त्व प्राप्त है जो इंग्लिस्थान मे लदन को। शेख़ सादी और हाफिज ने यही अपने चितन और मनन से कभी चार चाँद लगाये थे और अव सूफी अवाप्रसाद ने अपनी अभीष्ट क्राति की सक्रियता का केन्द्र इसी शीराज नगर को बनाया। आपने ईरानी बच्चो को आंग्लशिक्षा देने का महत्त्वपूर्ण कार्य अपनाया। भारत से (वकालत) शिक्षा उत्तीर्ण करने के अतिरिक्त आप एक सर्वोच्च सपादक भी थे तथा शिक्षा से आपका तादात्म्य था। अवाप्रसाद जी के प्रारभिक छात्रो मे से स्वाधीन भारत में वर्तमान ईरानी राजदूत ह्निजएक्सेलेंसी अली असगर हिकमत भी थे।

शीराज में क्रातिप्रेमियो का नेतृत्व करते हुए स्वर्गीय सूफी अवाप्रसाद को महान् प्रतिष्ठा एव आशातीत सफलता प्राप्त हुई। फलस्वरूप वहा अग्रेजो का रहना कठिन हो गया। समग्र शीराज पर क्रातिकारी तत्त्वो का एकाधिकार हो गया, तदनतर अकस्मात् भावी आँग्ल कुमक के पहुँच जाने पर शीराज मे कतिपय स्वदेश-कलक पूँजीवादी विश्वासघातियो के सहयोग से आॅग्ल आततायो ने विप्लवियो को

---

१ सौभाग्य से राजा साहिव इस समय भारतीय लोकसभा के सदस्य है।

कुचल डाला। सूफी अवाप्रसाद के ईरान स्थित निवास-स्थान की तलाशी ली गयी। सूफी महोदय का एक ही वाहु था और वे उसी एक वाहु से पिस्तौल द्वारा फायरिग करते रहे और शत्रु से कडा मोर्चा लिया। अन्तत गोलियाँ खत्म होने पर वन्दी वना लिये गये। अग्रेजो ने तथाकथित राज्यद्रोह के अपराध मे उन्हें मृत्यु-दण्ड दिया किन्तु वे इस दड-घोषणा को सुनते ही हँस दिए कि—

मजे इश्क के कुछ वही जानते है,
कि जो मौत को ज़िंदगी जानते हैं।

दूसरे दिन जव सूफी महोदय की कोठरी खोली गयी तो उनके स्थान पर उनका शव ही पाया गया। और वह भारतीय स्वाधीनता-सग्राम का शलभ ईरान की उर्वरा भूमि मे स्वातन्त्र्य वीज वोता हुआ स्वदेश (भारत) से दूर आत्मोत्सर्ग कर स्वातन्त्र्य-सग्राम के इतिहास मे सदा-सदा के लिए अमर हो गया।

ईरान मे क्रान्तिकारी-आन्दोलन के आदि-नेता सूफी अवाप्रसाद के प्रमुख शिष्य भारत मे ईरानी राजदूत हिज़-ऐक्सलेसी अली अस्गर हिकमत कविजनोचित उर्वर भूमि 'शीराज़' मे एक अत्यत सभ्रान्त व्यक्ति जनाव मिरज़ा अहमद अली हिकमत के गृह में २ अप्रैल १८९३ ई० को भूमिष्ठ हुए।

शिशु अस्गर की प्रारभिक शिक्षा अरवी, फारसी तथा अँग्रेजी में शीराज के ही अतर्गत हुई। तत्पश्चात् आप ईरान की राजधानी तेहरान गये, जहाँ आपने अपने दार्शनिक अध्ययन को जारी रखा।

यहाँ अमरीकी सहयोग से आँग्ल-शिक्षा पूर्ण की गयी। आप १९१८ ई० में ईरानी मन्त्रिमडल मे एक प्रशासकीय शैक्षिक उच्चायुक्त नियुक्त हुए और १९३० मे यूरोप भ्रमणार्थ गए। पाँच वर्ष से अधिक समय तक आप लदन और पेरिस में रहे। वहाँ की साहित्यिक दक्षता प्राप्त की। सन् १९३३ मे आपने शिक्षा-विभाग को सँभाला और शिक्षा-विभाग में वास्तविक लाभप्रद तथा क्रातिकारी परिवर्तन किया। १९४४ ई० में आप एक ईरानी शिष्टमंडल के नेता के रूप में भारतवर्ष भी पधारे एव भारत और ईरान के प्राचीनतम सास्कृतिक सपर्क को आधुनिक परिस्थितियो के साथ पुनरुज्जीवित किया। आपकी सास्कृतिक एव साहित्यिक अभिरुचि वस्तुत स्तुत्य एव अनुकरणीय है। आपके जीवन का विकास-क्रम निम्नाकित प्रकारेण है—

शिक्षा-विभाग में उचायुक्त	१९१८ ई०
शिक्षा-विभाग के प्रधान इन्स्पेक्टर	१९२१ ई०
एडमिनिस्ट्रेटर जेनरल	१९२८ ई०
विधान एव शिक्षार्थ यूरोप में	१९३० ई०
स्थानापन्न शिक्षामत्री	१९३३ ई०
स्थाई ,,	१९३४ ई०
लेनिनग्राड सास्कृतिक शिष्टमडलके नेता	१९३५ ई०
तेहरान-विश्वविद्यालय के सभापति	१९३५–३८ ई०
गृह-मत्री	१९३८–३९ ई०
स्वास्थ्य-मत्री	१९४० ई०

न्याय-मंत्री	१९४१ ई०
भारत मे सास्कृतिकमडल के नेता	१९४४ ई०
तेहरान विश्वविद्यालय मे ईरानी साहित्य के प्राध्यापक	१९३९ ई०
वैदेशिक कार्यों के मंत्री	१९४८–५० ई०
राज्य-मत्री	१९५३ ई०

प्रस्तावित क्रम के अतिरिक्त आप ईरान और अमरीकी सम्पर्क-समिति के सभापति है। बवई में ईरान-लीग के लब्धप्रतिष्ठ अध्यक्ष है। फ्रासीसी सुकवि सघ, ईरानियन अकादमी, रूसी-ईरानी सास्कृतिक सवध समिति, आदि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय पैमाने की उच्चस्तरीय सस्थाओ के आप सामान्य सदस्यो में से है। १९४५ ई० में आप लन्दन के यूनेस्को-सम्मेलन मे ईरानी प्रतिनिधिमडल के नेता थे और १९४८ ई० से आप ईरानी रेडक्रास सोसाइटी के उपसभापति है। निम्नाकित सम्मानो से आप और सम्मानित है। १९१८ ई० में पेरिस के सारबान-विश्वविद्यालय से साहित्य का सम्मान्य प्रमाण-पत्र तथा ईरानी सरकार से 'हुमायूँ-आदेश' का आपने प्रथम श्रेणी का पदक प्राप्त किया। मिस्री सरकार से नील के आर्डर का प्राथमिक तमगा, पजाव के लाहौर-विश्वविद्यालय से १९५३ ई० में डी० लिट्० की उपाधियाँ प्राप्त की। जार्डन सरकार का प्रथम पदक। ईरान-सरकार के शिक्षाविभाग से प्रथम कोटि का वैज्ञानिक पदक। फ्रासीसी-सरकार से महान् प्रतिनिधि 'कमाडर ग्रेड' की प्रतिष्ठा प्राप्त हुई।

ईरानी सरकार से प्राथमिक पदक। अफगानिस्तान शासन से प्रधान नायक का पदक, और दिल्ली-विश्वविद्यालय से डी० लिट्० का सम्मान्य प्रमाण-पत्र १९५४ ई० मे प्राप्त हुआ।

अब आपकी साहित्यिक कृतियो की सूची इस प्रकार है —

(१) पारसीए नग्ज़—(ईरानी महाकवियो की रचनाओ का जीवन-चरित्र समवेत सपादन)।

(२) सादी से लेकर जामी तक—(केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के सुप्रसिद्ध प्राध्यापक प्रो० ब्राउन की रचना 'ईरान का साहित्यिक इतिहास' के द्वितीय भाग का फारसी अनुवाद)।

(३) जामी—(महाकवि जामी का आलोचनात्मक अध्ययन)।

(४) पाँच कहानियाँ—(शेक्सपियर के पाँच नाटको का फारसी अनुवाद।

(५) नेवाई—(अमीर शेर अली नेवाई पर विवेचनात्मक निवध)।

(६) कश्फुल असरार—(कुरान सवधी फारसी व्याख्या)।

(७) सलामान व अवसाल—(जामी की रचना तथा फिट्जगैरल्ड के अग्रेजी अनुवाद पर एक निवध)।

(८) मजालसउन्नफायस—(जो व्याख्या तथा प्राक्कथन समेत है)।

(९) सैयद अली हमदानी काश्मीर में।

(१०) रोमियो जूलियट और लैला मजनूँ।

(११) शेक्सपियर और निजामी गजवी पर निवन्ध।

(१२) अमसाले कुरआन (कुरान की लोकोक्तियो एव मुहावरो पर एक प्रणयन)।

(१३) 'फारसी साहित्य की रूपरेखा' अंग्रेजी भाषा मे। प्रकाशक ईरान सोसाइटी कलकत्ता।

(१४) वयादे हिन्द (भारतवर्ष के सबध मे फारसी भाषा मे रोचक कविता)—चित्रो, उर्दू और अंग्रेजी अनुवाद सहित।

(१५) भारतीय पत्थरो पर फारसी लेख—१९५७, प्रकाशक ईरान सोसाइटी कलकत्ता।

यह वात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि विगत कुछ वर्षो में ईरान मे कई मत्रिमडल अस्तित्व में आये और कुछ का अन्त हो गया, किन्तु यह वडे उत्साह और हर्ष की वात है कि ईरान के प्रत्येक मत्रिमडल ने डॉ० हिकमत के सहयोग की महत्त्वपूर्ण अपेक्षा की। वह प्रत्येक मत्रिमडल में सम्मिलित होने के अतिरिक्त सयुक्त-राष्ट्र-सघ की 'आर्थिक सास्कृतिक सुरक्षा समिति' जिसे 'यूनेस्को' के नाम से अभिहित करते है, आप ईरान के स्थायी कर्णधारो में से रहे। इसी कार्य-काल मे भारतवर्ष की ओर से उप-राष्ट्रपति डॉ० राधाकृष्णन् भी रहे है। आप प्रथम श्रेणी के राजनीतिज्ञ होने के अतिरिक्त शैक्षिक मामलो मे भी अत्यन्त जानकारी रखते है। मत्री होते हुए भी आप तेहरान-विश्वविद्यालय में प्रोफेसर रहे और अत्यन्त तल्लीनता के साथ छात्रो को शिक्षा देते रहे। भारतवर्ष के साथ आप का अटूट प्रेम है। अतएव जव प्रथम वार

भारत पधारे तब आपने अपने स्व० गुरु अहब्रह्मास्मवादी सूफी अम्बाप्रसाद के सम्मान मे अपनी स्मृतियो के एकत्रीकरण द्वारा भारत के क्रान्तिकारी पक्ष से तादात्म्य स्थापित किया। आप फारसी के एक मान्य महाकवि हैं और हाल ही मे आपने भारतवर्ष के सम्बन्ध में एक कविता भी लिखी है। आपके शुभागमन से भारत और ईरान का प्राचीनतम ऐतिहासिक सपर्क नवीन हो गया है। आपका भौतिक अस्तित्व यद्यपि ईरान के लिए ही लाभप्रद है परतु विश्व-साहित्य मे आप सार्वभौम और विराट् हैं। आपने भारत के सबध मे एक लम्बी कविता के रूप मे अपनी शुभकामना भी प्रकट की है।

कलकत्ता विश्वविद्यालय, कलकत्ता।
शाहिनशाह ईरान के ३९ वे
जन्मोत्सव के शुभ अवसर पर
२६ अक्तूबर, १९५७

हीरालाल चोपड़ा

——x——

अनुक्रम

फ़ारसी साहित्य की रूपरेखा

प्रथम व्याख्यान

*

इतिहास

*

रूपरेखा

[क] ईरान के इतिहास मे प्रमुख राजनीतिक युग। चिन्तन के उद्भव एव विकास पर प्रत्येक राजनीतिक युग के प्रभाव।

[ख] अंतर्राष्ट्रीय इतिहास से सम्बन्धित एवं विश्व इतिहास के लिए मौलिक महत्त्व की घटनाएँ।

[ग] इनमे से कुछ घटनाओ का भारत के इतिहास पर प्रत्यक्ष प्रभाव।

[घ] भारतीय घटनाओ का ईरान के इतिहास पर प्रभाव।

[ङ] उपसंहार।

[क] ईरान के इतिहास के प्रमुख राजनीतिक युग

ईरान का इतिहास २,५०० वर्षों का इतिहास है जिसके तथ्य
नखित हैं और जिसके विवरण आधिकारिक अध्ययन एवं विचार-
वमर्श की सामग्री प्रस्तुत करते हैं। स्थूलतः इसका आरम्भ ५५०
ईसा पूर्व) में हुआ और आज तक गतिमान है। इसे तीन खंडों
ं बाँटा जा सकता है:

ाथम खण्ड : "इस्लामपूर्व युग"—साईरस महान् द्वारा ५४६ (ई० पू०) में स्थापित अकीमीनियन वंश के उदय के साथ इस युग का आरंभ माना जा सकता है। इसका अंत ११ शताब्दियो के बाद ६३६ ईसवी में, अरबी (मुस्लिम) आक्रान्ताओ द्वारा सासानियन वंश के पराजय के साथ हुआ।

द्वितीय खण्ड "इस्लामी युग"—अरबों के तत्त्वावधान में इस्लाम के संस्थापन कालसे लेकर अब तक (जब कि १९वीं शती के उदय के साथ एक नये युग का आरम्भ माना जा सकता है) इस युग का जीवन १४ शताब्दियों का रहा।

नृतीय खण्ड "आधुनिक युग"—इसका आरंभ वास्तव में १९वीं शती

अकीमीनियम वंश के आगमन के पूर्व ही ईरान की भौगोलिक सीमा एक ओर आक्सस नदी और फारस की खाड़ी थी, दूसरी ओर सिन्धु और फुरात नदी। इस विशाल भूभाग के उत्तर में आर्य परम्परा वाली एक जाति रहती थी जिसे यूनानी लोग 'मीड्स' कहते थे। इनका उल्लेख शाहनामा में 'पीशदादियाँ!' नाम से हुआ है। परंतु एक तथ्यवादी के दृष्टिकोण के अनुसार, यद्यपि ईरानी सभ्यता और संस्कृति एवं विशुद्ध आर्य संस्कार उस समय विद्यमान थे, तथापि ईरान की विशिष्ट संस्कृति और उसके वास्तविक लिखित इतिहास का आरंभ अकीमीनियन वंश के राजत्व काल से हुआ।

प्रथम खण्ड : इस्लामपूर्व युग—

इस युग में ईरान की विशुद्ध राष्ट्रीय संस्कृति अपने महत्तम विकास तक पहुँच चुकी थी, जिसके अवशेष अब भी देश के भीतर और बाहर पाए जाते हैं। ईरानी इतिहास का युग तीन विभिन्न भागों में बांटा जा सकता है।

[क] अकीमीनियन (हखामनिश) युग या शाहनामा के शब्दों में कियानियों का युग। इस युग का आरम्भ साईरस महान् (५४६ ई० पू०) के साथ हुआ जिसे कुछ लोग शाहनामा में उल्लिखित "कैखुसरो" मानते हैं। इसका अंत सिकन्दर महान् के आक्रमण के साथ हुआ, जिसने अकीमीनियनो को पराजित कर उस वंश का अंत कर दिया। अंतिम अकीमीनियन राजा ३३० ई० पू० में मार डाला गया।

इस युग की प्रमुख घटनाएँ है—प्राचीन फारसी भाषा का उदय और ईरान के सास्कृतिक एवं राजनीतिक प्रभाव का भारत से यूनान तक के भूखण्डो तक प्रसार।

[ख] दूसरा युग पार्थियन युग है जिसे शाहनामा में अश्कानियाँ का युग कहा गया है। यह युग "कबीलो के शासको" के शासन का युग था जिसमें यूनानी सिल्यूकिड्स वंश तथा बाद के सरदार, मुख्यतः अश्क के वंशज, समाहित है। अश्कवंशीय सरदारो ने देश के विभिन्न भागो के छोटे परगनो पर शासन किया। इस युग का आरंभ ३३० ई० पू० में डैरियस कोडोमैनस के वध के साथ हुआ और अंत २२६ ई० में अर्दशीर द्वारा अश्कवंशी अर्दवाँ अश्कानी की हार के साथ।

इस युग में ईरान यूनान के राजनीतिक एवं सांस्कृतिक प्रभाव से आच्छन्न था। इस युग से संबंधित लिखित विवरणो एवं विस्तृत सूचनाओ का अभाव है और इसे ईरान के इतिहास का "अंधकार युग" कहा जा सकता है।

[ग] पहलवी युग, या शाहनामा के अनुसार सासानियो का युग है। यह युग अर्दवाँ के पतन और अर्दशीर द्वारा २२६ में सासानी वंश के संस्थापन के साथ आरंभ हुआ और ईरान के अरब (मुस्लिम) आक्रमण तथा ६५१ ई० में यज्दजर्द तृतीय की मृत्यु पर ईरानी साम्राज्य के छिन्न-भिन्न हो जाने तक चलता रहा।

हमारे युग के समीप होने के कारण इस युग के विषय में अपेक्षाकृत वृहत्तर विवरणराशि बच रही है—यूनानी, रोमन और

अरब इतिहासकारों द्वारा लिखित पुस्तकों, विज्ञप्तियों एवं उत्कीर्ण शिला-लेखों के रूप में भी और शाहनामा में उल्लिखित वृत्तों के रूप में भी। यहाँ पहुँचकर ईरान का इतिहास लोक-कथाओं का रूप त्याग देता है और लिखित इतिहास बन जाता है।

ईरानी इतिहास का प्रथम खण्ड, (इस्लामपूर्व युग), जिसकी अवधि ११ शताब्दी तक रही और जिसे "शुद्ध ईरानी युग" कहा जा सकता है, वह युग है जिसने फारसी भाषा के जन्म का घोष किया--पहले अवेस्ता और प्राचीन फारसी फ़ुर्सकदीम के रूप में, तत्पश्चात्--पहलवी या मध्य फ़ारसी के रूप में। चित्रलिपि में लिखे गए डरियस महान् (५२१ ई० पू०) का शिलालेख और उसके वंशजों के कुछ लेख काल की विडंबना से सुरक्षित रह गए हैं। इसी तरह प्राचीन भद्र जर्तुश्तियों (जोरोस्ट्रियनो) द्वारा अवेस्ता की गाथाएँ आगामी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रक्खी गई हैं। इस युग के ये ही दो लिखित विवरण बच पाए हैं।

वैसे ही, इस युग में, ईरान की जनता के पास जर्तुश्ती नामक अपना धर्म हो गया। वैदिक और बौद्ध शिक्षाओं के प्रभाव प्राचीन ईरान म, विशेषकर पूर्व में स्पष्ट है।

इस्लामपूर्व खण्ड में प्रथम युग तब समाप्त हुआ जब सिकन्दर के आक्रमण के फलस्वरूप दक्षिणी ईरान में फुरात घाटी और ईरान के पूव में आधुनिक अफगानिस्तान सहित रावी-तट तक के प्रदेश पर यूनानी आधिपत्य स्थापित हो गया।

यह सच है कि यद्यपि यूनानी शासन अथवा संस्कृति ईरान में अधिक दिन तक न रहे, तथापि क्योंकि ईरानी जनता की भाषा और लिपि, संस्कृति और धर्म यूनानियो से भिन्न थे, इसलिए उनके अल्पकालीन आधिपत्य के प्रभाव प्राय चार शताब्दी तक बने रहे और इसके अवशेष अफगानिस्तान में अब भी देखे जा सकते हैं।

इस युग से सिकन्दर संबंधी अनेक कथाएँ एवं जनश्रुतियां प्राप्त हुई। अनेक 'सिकन्दरनामो' के अतिरिक्त इस युग से और कोई उल्लेखनीय विवरण प्राप्त नहीं है।

तीसरा युग, अर्थात् सासानी युग, ईरानी पुनर्जन्म का युग था। इस युग में ईरानी संस्कृति एक विशेष विभूति और गौरव से सम्पन्न हो गई। सिकन्दर, उसके उत्तराधिकारियो एवं अश्कानियो अथवा पार्थियनो द्वारा दलित जरतुश्ती धर्म पुनरुज्जीवित किया गया। पहलवी भाषा और लिपि का जनता में प्रचार हुआ। अनेक पहलवी पुस्तकें और पाण्डुलिपियां आज तक बची रह गई हैं। इस युग में ईरान के पश्चिमी खंडो में ईसाइयत के और पूर्वी खडो में हिन्दू-धर्म के कतिपय प्रभाव दृष्टिगोचर होते हैं।

इस युग के लिखित तथ्यो में जो कुछ अब तक बच सका है, वह निम्नांकित है : पहलवी लिपि में अंकित शिला-लेख, सिक्के, मुद्राएँ, राजमहल में स्थित शिलाखण्ड तथा अवेस्ता के अनुवाद और धार्मिक ग्रंथ।

इस युग का साहित्य अधिकतर धार्मिक है जिसमें जरतुश्ती धर्म और प्रार्थनाओं पर विचार-विमर्श सन्निहित है। आधुनिक ईरान की भाषा में इस युग एवं साहित्य का प्रभाव आज भी परिलक्षित होता है। अरब-आक्रमण के बाद तीन शताब्दियों तक ईरान की भाषा और उसके साहित्य पर पहलवी साहित्य का प्रचुर प्रभाव बना रहा।

इस युग के इतिहास की सर्वाधिक प्रामाणिक ईरानी सामग्री फिरदौसी का "शाहनामा" है। इसमें महाकाव्य की शैली में लिखे गए छंदो में प्रथम दो युगो—पेशदादियाँ और कियानियो—की कथाएँ वर्णित है। संक्षेपतः इसमें तीसरे युग—अश्कानियो—का भी वर्णन है, जो चार शताब्दियो तक रहा।

सासानी युग से शाहनामा विस्तृत विवरण प्रदान करता है, जिसका ईरान के इतिहास में प्रामाणिक महत्व है। शाहनामा के के रचयिता, अबुल कासिम फिरदौसी, चौथी शती (हिजरी) के अन्त में अर्थात् १०वीं शताब्दी ईसवी में तूस में रहे।

द्वितीय खण्ड इस्लामी युग—

६३७ ई० में (१६ हिजरी) अरब (मुस्लिम) आक्रान्ताओ द्वारा मदायन (तेसीफोन) के पतन और ६५१ ई० में यज्दजर्द तृतीय की मृत्यु के पश्चात् सासानी-साम्राज्य का मूलोच्छेद हो गया और ईरान के इतिहास का द्वितीय युग अरबी एवं ईरानी जातियो

और अरवी भाषा एवं पहलवी भाषा के समागम तथा समस्त ईरान पर इस्लाम के प्रचार के साथ आरंभ हुआ।

यह युग (इस्लामी युग) दो भागो में बांटा जा सकता है और प्रत्येक भाग की अपनी विशेषताएँ हैं :

[क] 'इस्लाम का स्वर्ण युग' नाम से अभिहित यह प्रथम भाग ६३२ ई० में खिलाफत की स्थापना के साथ प्रारंभ हुआ और १२५८ ई० में चंगेज के पौत्र हुलाकूखाँ द्वारा वगदाद के अपहरण के साथ समाप्त हुआ। ६६१ ई० में उमय्यों द्वारा दमिश्क में स्थापित खिलाफत (कैलिफेट) वाद में, ७५० ई० में, अव्वासियों द्वारा वगदाद में स्थानांतरित कर दी गई।

इस युग में पूर्वी, उत्तरी और दक्षिणी ईरान में सफ्फारी, सामानी, वोवैही नामक अनेक ईरानी तत्पश्चात् गजनवी, सेलजूकी, ख्वारज्मशाही नामक तुर्की राजवंशो ने स्वतंत्र राज्य स्थापित किये।

भारतीय इतिहास को प्रभावित करने की दृष्टि से इन वंशों में सर्वप्रमुख गजनवी थे जिन्होने ९६२ ई० में गजनी में अपना राज्य स्थापित किया। पंजाव से लेकर कन्नौज तक सुल्तान महमूद के आक्रमण और अपहरण विदित हैं। उसके वाद, उसके उत्तराधिकारियो तथा गोरी सरदारो ने उत्तरी भारत में अपने विजय अभियान जारी रक्खे।

इस्लामी संस्कृति नामक एक नयी संस्कृति का जन्म इस युग की एक प्रमुख विशेषता है। इसके प्रमुख प्रचारक ईरानी थे।

इस युग में ईरानी विद्वानों द्वारा ज्ञान-विज्ञान के विविध क्षेत्रों—विधान, विज्ञान, साहित्य, दर्शन आदि—में अनेक प्रख्यात ग्रंथ, विशेषतया अरबी भाषा में, लिखे गए।

अरबी और पहलवी भाषाओं के सम्मिश्रण से आधुनिक फारसी भाषा का जन्म हुआ। शीघ्र ही इस नवजात भाषा में गद्य और पद्य के नये रूप अवतीर्ण हुए और कालान्तर में यह स्पष्टता वाग्वैदग्ध्य एवं स्वच्छता के सर्वोच्च शिखर तक पहुँच गई। खुरासान और फार्स के मुंशियों जैसे प्रसिद्ध गद्य लेखक, तथा ईरान के प्रसिद्ध कवि इसी युग में हुए।

'ईरान की भाषा और उसका साहित्य' नामक अगले व्याख्यान में इस विषय का सविस्तार निरूपण मिलेगा।

[ख] 'इस्लाम का अवसान' नामक यह द्वितीय युग मंगोल हुलाकू द्वारा १२५८ ई० में बगदाद विजय के साथ प्रारंभ हुआ और १९वीं शती के आरंभ में ईरान-रूसी युद्धों का अंत होने पर यह युग समाप्त हुआ।

इस युग को भी दो भागों में बाँटा जा सकता है:

प्रथम—१२५६ ई० में हुलाकू के आक्रमण के साथ मंगोलों तथा तातारियों के उत्थान का युग प्रारंभ हुआ और प्रथम शाह-इस्माइल के शासनारूढ़ होने एवं उसके द्वारा १५०२ ई० में तब्रीज-विजय तक चलता रहा।

द्वितीय—ईरान में राष्ट्रीय साम्राज्यो का युग, अर्थात् सफवियो और काजारो का युग। १५०२ में शाह इस्माइल प्रथम के सत्तारूढ़ होने से लेकर १९०६ ई० में वैधानिक शासन स्थापित होने तक यह युग रहा।

इस युग की विशेषताएँ है: शिया पंथ का राजधर्म के रूप म संस्थापन और ईरान का भारत के अतिरिक्त अन्य सभी इस्लामी देशो से विच्छेद।

इसी युग में १३९७ ई० में तैमूर ने भारत पर आक्रमण किया और वाद में उसके एक वंशज (वावर) ने १५२६ ई० में इस देश म एक मंगोल राज्य की स्थापना की। उनके दरवार ईरान की सास्कृतिक और वौद्धिक परम्पराओं से वहुत प्रभावित थे।

इस युग की दूसरी प्रमुख घटना है ओटोमान तुर्कों का सत्ता धारी होना और उनके द्वारा १४५३ ई० में विजित कुस्तुन्तुनिया में तुर्की खिलाफत की स्थापना। ईरान और ओटोमान तुर्कों के वीच वहुत दिनो तक संघर्ष चलता रहा, जिसके फलस्वरूप इस्लामी सस्कृति का अत्यधिक ह्रास हुआ।

तृतीय खण्ड : आधुनिक युग—

इस लंवी कथा का तृतीय खण्ड आधुनिक और समसामयिक इतिहास से संवधित है। यह युग रूस द्वारा १८२८ ई० में ईरान के पराभव से प्रारंभ हुआ। यह युग अव तक चल रहा है।

इस युग की प्रमुख विशेषताएँ हैं: एशिया में तथा अन्यत्र राष्ट्रीयता का उदय और अनेक स्वातंत्र्य एवं सुधार आंदोलन। इसी युग में विधान तथा दीवानी और फ़ौजदारी कानून नई पद्धति से बनाए गए और पूर्व में विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई।

भाप, बिजली और अणु की शक्तियों के नए अनुसंधान, आधुनिक उद्योगों का विकास और अनेक देशों में जनतंत्र से उत्पन्न परिणाम--इस युग की कुछ अन्य विशिष्टताएँ हैं।

ईरान के आधुनिक युग की सबसे महत्त्वपूर्ण तिथि है १३२४ (हिजरी) अर्थात् १९०६ ई०, जब निरंकुश शासन के स्थान पर वैधानिक राजतंत्र आसीन हुआ।

इस प्रकार इस लम्बे इतिहास की विविध घटनाओं की उन तिथियों को स्मरण रखने के लिए जो विभिन्न युगों के प्रारंभिक चरण स्वरूप हैं, इस परिच्छेद के अंत में दी गई संक्षिप्त तालिका बहुत उपयोगी सिद्ध होगी क्योंकि साथ ही साथ उसमें भारतीय इतिहास की समानांतर आधुनिक तिथियाँ भी दी गई हैं।

[ख] अंतर्राष्ट्रीय इतिहास से सम्बन्धित घटनाएँ

पूर्वोक्त कुछ घटनाएँ न केवल नये युगों का सूत्रपात करनेवाले विशाल सामाजिक एवं राजनीतिक आंदोलनों का ही कारण नहीं हैं, विशेष कर ईरान में; बल्कि उन्होंने विश्व-इतिहास को भी प्रभावित किया है। सामान्यतः सभ्य देश तो इस प्रभाव से अछूते

नहीं रहे हैं। इनमें से ४ प्रमुख घटनाएँ यहाँ उल्लिखित की जाती हैं :

१. सिकन्दर महान् द्वारा एशियाई आक्रमण (३३४ ई० पू०) ने न केवल ईरान में अकीमीनियन वंश का उच्छेद किया बल्कि अफगानिस्तान से मिस्र तक सभी मध्यपूर्व देशो के इतिहास की धारा बदल दी और इसके प्रभाव उत्तरी भारत पर पड़े बिना न रह सके।

२. इस्लामी सेनाओ के अभियान (६३५ ई०) के फलस्वरूप एक ओर सासानी साम्राज्य और ईरान की राष्ट्रीय संस्कृति छिन्न-भिन्न हो गये और यूनानी शासको के एशिया स्थित राज्य अरब ससार में अंतर्भुक्त हो गये और दूसरी ओर एक नये शक्तिशाली साम्राज्य की स्थापना हो गई जिसका विस्तार सिंधु तट से अतलांतक तक और आक्सस नदी से अफ्रीका के पूर्वी क्षेत्रो तक था। इस घटना ने तत्कालीन महान् राष्ट्रों अर्थात् मंगोलिया, यूरोप (आइबेरियन और बलकान प्रायद्वीप), उत्तरी अफ्रीका, एशिया माइनर, ईरान और भारत के इतिहासो में एक नया अध्याय खोला।

३. चगेज खाँ के नेतृत्व में मंगोल, और तत्पश्चात् तैमूर के नेतृत्व में तातार अभियानो ने आगे बढ़कर पश्चिमी और मध्य-एशिया, यहाँ तक कि मध्यपूर्व और यूरोप तक को आक्रान्त किया। यूरोप की आधुनिक सभ्यता के उद्भव के अनेक कारणो में से ये आक्रमण भी एक कारण थे।

४. स्लैव जातियो का दक्षिण दिशा मे प्रयाण, जिसके फलस्वरूप ईरान और स्लैवो में सघर्ष हुआ (१८०७ ई०), जो पूर्वी राष्ट्रो के लिए चेतावनी स्वरूप था क्योकि इस तरह "पूर्वी प्रश्न" उत्पन्न हुआ जिसके कारण यूरोप में "शक्ति संतुलन" की नीति का सूत्रपात हुआ। इसने जनतंत्र, तानाशाही और साम्यवाद जैसे विचार-प्रवाहो और नये आन्दोलनों को गति प्रदान की।

इन सभी घटनाओ में, वस्तुतः ईरान केन्द्रीय मंच-सा रहा जहाँ पूर्व और पश्चिम के विजेताओ ने अपने महत्त्वपूर्ण भाग अदा किए। इनमें से अधिकाश विषयो में, जैसे मंगोल और तातार जातियों का विस्तार, ईरानी सभ्यता और संस्कृति विश्व के अन्य देशों तक फैल गई।

[ग] पूर्वोक्त कुछ घटनाओ का भारत के इतिहास पर प्रत्यक्ष प्रभाव.

इस बीच भारत का राजनीतिक इतिहास पूर्वोल्लिखित अनेक घटनाओं से प्रभावित हुआ। अतः भारतीय इतिहास के अध्येता को उन घटनाओ का अध्ययन और निरीक्षण, ऐतिहासिक प्रगति और भारत पर उनके स्पष्ट परिणामो के प्रभाव की दृष्टि से, करना चाहिए। जिन घटनाओ ने भारत के राजनीतिक इतिहास को प्रभावित किया उनमें से उदाहरणस्वरूप कुछ निम्नाकित हैं :

१. यूनानी सस्कृति का विस्तार, सिकन्दर और सिल्यूकस वंश के तत्त्वावधान में (३३० ई० पू० से २५० ई० तक)।

२. गजनवी शासन की स्थापना, गजनी के महमूद और उसके वंशजो के नेतृत्व में (१००० ई०)।

३. मगोल और तैमूरी आक्रमण, ईरान और भारत पर (१३९७ ई०), जिसके फलस्वरूप भारत में बाबर और उसके वंशजो के नेतृत्व में चगताई शासन स्थापित हुआ।

४. ईरान पर अफगान आक्रमण (१७२२ ई०) के कारण उत्तर-पश्चिमी भारत को पराजित करना अब्दाली के लिए सुगम हो गया।

५. ईरान पर रूसी आक्रमण (१८०८ ई०) ने भारत के रक्षार्थ ब्रिटिश सरकार को सचेत कर दिया। परिणामतः पश्चिमोत्तर भारत में सैनिक महत्त्व के अनेक गढ़ बनाए गए। इसी के कारण इस देश में आधुनिक सेना का संगठन भी हुआ।

[घ] भारतीय घटनाओं का ईरान के इतिहास पर प्रभाव

यह भ्रान्ति न उत्पन्न होनी चाहिए कि ईरान में होनेवाली राजनीतिक हलचलों का प्रभाव ही हमेशा भारत पर पड़ता रहा। उसी तरह, भारतीय घटनाओं, विशेषकर चिंतन और संस्कृति के आंदोलनों, या इस देश के वाणिज्य और अर्थविधान ने ईरान के इतिहास पर नगण्य प्रभाव नहीं डाला। रोचक होने पर भी ऐसी घटनाओं या हलचलों का विस्तृत निरूपण प्रस्तुत व्याख्यान के क्षेत्र से बाहर है। तथापि मैं उनमें से कुछ का उदाहरण स्वरूप उल्लेख करूँगा और आशा करूँगा कि भारत के युवा विद्यार्थी इस विषय पर विस्तार से अध्ययन और अन्वेषण करेंगे।

१. भारत और यूरोप के वीच "मिल्क रोड" नामक व्यापार मार्ग की स्थिति। कई शतियों तक भारतीय सामग्री (सिल्क, मसाले, मलमल आदि) से लदे हुए कारवाँ या तो फारस की खाड़ी और होरमुज के मार्ग से अथवा कावुल और हिरात से ईरान पहुँचते थे। एशिया-माइनर, यूनान, रोम, यहाँ तक कि पश्चिमी यूरोप जाते हुए उनके मार्ग में कावुल और हिरात पड़ते थे। यह स्थिति १५४३ ई० तक रही। वाद में, स्वेज नहर वन जाने के कारण यह मार्ग विल्कुल विस्मृत हो गया।

२. भारत मे वौद्धमत का जन्म और इसका ईरान और पश्चिमी एशिया में प्रसार (द्वितीय शताब्दी) ईसा पूर्व।

३. तैमूर और उसके वशजो का भारत मे सत्तारूढ होना, जिन्होने ईरानी पद्धति पर १५२६ ई० में अपने शासन-यंत्र और दरवार की स्थापना की।

४. भारत में व्रिटिश साम्राज्य और, जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, पश्चिमोत्तर भारत में सैन्य एवं राजनीतिक महत्त्व की रक्षा-रेखा का निर्माण।

[ङ] उपसंहार

आपके पड़ोस में २,५०० वर्षों से अधिक की अवधि में अभिनीत लम्वे नाटक का यह संक्षेप में एक आकलन है। कुछ दृश्य रोचक और सुखद थे और उनसे हमारे मित्रों और पड़ोसियो का अनरंजन हुआ, जव कि कुछ दृश्य इतनी भयोत्पादक घटनाओं से

युक्त थे कि हमारे घोरतम शत्रुओं ने भी अपनी सहानुभूति और संवेदनाएँ हमें अर्पित कीं।

फिर, यह न केवल एक ऐसे राष्ट्र की कथा है जो आपका पड़ोसी है, बल्कि आप ही के वंश और परिवार का एक सदस्य है। इसका इतिहास संसार के इतिहास का एक पृथक और स्पष्ट परिच्छेद है और ऐसी असाधारण घटनाओं से युक्त है जिनमें ज्ञान-प्रद शिक्षाएँ हैं और जो निष्पक्ष मस्तिष्क से अध्ययन करनेवालों का पथ-प्रदर्शक बन सकती हैं। बहुत पहले, महान् ईरानी कवि सादी ने प्रत्येक बुद्धिमान् व्यक्ति से इस लम्बी कहानी को पढ़ने का अनुरोध किया था। उन्होंने कहा था :

हदीसे पादशाहाने अजम रा।
हिकायत नामाए ज़ह्हाको जम रा॥
बिखानद होशमन्दे नेक अजाम।
न शायद ख़ीरा करदन ज़ाय अय्याम॥
मगर कज़ ख़ूये नेका पद गीरन्द।
वज़ आईने बदा इबरत पज़ीरन्द॥

: अनुवाद :

"ईरान के राजाओं की कथाएँ और जह्हाक तथा जमशेद सम्बंधी कथा-पुस्तकें उन सभी बुद्धिमान व्यक्तियों द्वारा पढ़ी जाती हैं, जो सुखी जीवन बिताना चाहते हैं और व्यर्थ समय नहीं नष्ट करते। संभव है, गुणियों के जीवन से वे शिक्षा पाएँ और इस प्रकार खलों के आचरण से बच सकें।"

हिन्दी-ईरानी इतिहास की प्रमुख तिथियों
की
सार-तालिका

ईरान]	[भारत
१. इस्लाम पूर्व युग	
साईरस महान् का शासनारूढ़ होना। अकेमीनियन वंश की स्थापना ... ५४६ ई० पू०	भगवान् महावीरका जन्म...५५० ई० पू०
डैरियस महान् की मृत्यु... ४८६ ई० पू०	भगवान् बुद्ध की मृत्यु... ४८३ ई० पू० (?)
एशिया पर सिकंदर का आक्रमण ... ३३४ ई० पू०	चन्द्रगुप्त मौर्य का पाटलिपुत्र से निष्कासन ... ३२५ ई० पू०
सिल्यूकस वंश का ईरान में प्रस्थापन ... ३२० ई० पू०	सिल्यूकस का चन्द्रगुप्त मौर्य द्वारा पराभव ...३०५ ई० पू०
अश्क वश की अश्क प्रथम द्वारा स्थापना...२५० ई०पू०	महेन्द्र के नेतृव में लंका में अशोक का बौद्ध-मंडल ... २५० ई० पू० (?)
सासानी वंश की स्थापना ... २२६ ई०	
अरब (मुस्लिम) आक्रान्ताओं	

ईरान] [भारत

द्वारा कादसिया के युद्ध में सासानियो की पराजय ... ६३७ ई० — हर्षवर्धन की मृत्यु ... ६४७ ई०

यज्दजिर्द तृतीय की मृत्यु... ६५१ ई०

२. इस्लामी युग

ईरान	भारत
[अ] पैगम्बर मुहम्मद का मक्का से मदीना की ओर प्रस्थान ... ६२२ ई०	फारसी राजदूत का पुलकेशिन द्वितीय चालुक्य के दरबार में जाना ... ६२५ ई०
उमय्या खिलाफतकी दमिश्क में स्थापना ... ६६१ ई०	ह्वेन-सांग दक्षिण भारत में... ६४१ ई०
अब्बासी खिलाफत की बग़दाद में स्थापना ... ७५० ई०	बंगाल में पाल-वंश का उदय... ७५० ई०
ईरानी राजवशो का उदय :	
१. सफारी २. सामानी...६१३ई०	कन्नौज में परिहार और राठौर वंशों का उदय।
३. ग़जनवी...१००० ई०	जयपाल की महमूद द्वारा हार... १००१ ई०
४. सल्जूक...१०५५ ई०	कन्नौज के राजा भोज परिहार की मृत्यु ... १०६० ई०

ईरान]	[भारत
५. ख्वारज़मशाही... ११५७ ई०	चौहानों का अभ्युदय...११६३ ई०
[ब] इस्लामी संस्कृति का पतन और तुर्की खिलाफत का युग।	
चंगेज़ का आक्रमण...१२३०ई०	ईल्तुतमिशका खलीफा द्वारा दिल्ली का सुल्तान स्वीकृत...१२२६ ई०
हुलाकूका आक्रमण और बग़दाद का विध्वंस... १२५८ ई०	नासिरुद्दीन महमूद (ग़ुलाम)... १२४६–६६ ई०
तैमूर का ईरान पर आक्रमण ...१३८२ ई०	दिल्ली का तैमूर द्वारा ध्वंस ... १३९८ ई०
ओटोमान तुर्कों द्वारा कुस्तुंतुनिया-विजय ...१४५३ ई०	बहलोल लोदी—राज्यारंभ... १४५१ ई०
शाह इस्माइल प्रथम... राज्यारंभ... १५०० ई०	सिकन्दर लोदी—राज्यारंभ... १४८९ ई०
नादिरशाह द्वारा सफवी वंश का उच्छेद... १७३५ ई०	नादिरशाह द्वारा दिल्ली का विध्वंस ...१७३९ ई०
क़ाजार वंश की स्थापना... १७९४ ई०	महादजी सिंधिया की मृत्यु ... १७९४ ई०

३, आधुनिक युग—

ईरान-रूसी युद्ध का अंत... १८२८ ई०	विलियम बैंटिक गवर्नर जनरल हुआ ...१८२८ ई०
वैधानिक शासन घोषित... १९०६ ई०	मार्ले-मिण्टो सुधार...१९०९ ई०

द्वितीय व्याख्यान

*

भाषा

*

रूपरेखा

[क] परिभाषा और क्षेत्र ।

[ख] इतिहास के विभिन्न युगों में फ़ारसी का मूल्य और महत्त्व ।

[ग] प्राचीन फारसी ।

[घ] मध्य फारसी ।

[ङ] अर्वाचीन फारसी ।

[च] सारांश ।

[क] परिभाषा और क्षेत्र

फारसी नामक सुन्दर, मधुर और कर्णप्रिय भाषा सम्प्रति ईरान, अफगानिस्तान और ताजिकिस्तान (मध्य-एशिया) में बोली जाती है। इसका मूल बहुत प्राचीन है। विद्वानो और भाषा-विज्ञान-वेत्ताओं ने अब से ३००० वर्ष पूर्व इसका स्रोत ढूँढ़ निकाला है। उनका विश्वास लिखित प्रमाणो से पुष्ट होता है, जो निम्नलिखित हैं:

१. मेखी-लिपी के लेखपत्र—ये ईरान और समीपवर्ती देशो में पाए गए हैं और साइरस महान् तथा उसके उत्तराधिकारियो के द्वारा लिखे गए थे (छठी शती ई० पू०) और ये ईरान में पर्सीपोलिस और पज़ार्गाद (शीराज़ के उत्तर में), बीस्तून (किरमानशाह के पश्चिमोत्तर में) और गंजनामेह (हमादान) इत्यादि में पाए जाते हैं।

२. ज़ोरोस्ट्रियनो की धार्मिक पुस्तकें—इनमें अकेमीनियन-पूर्व युग से लेकर १०वीं शताब्दी ई० तक का काल समाहित है। दुर्भाग्यवश सिकंदर के आक्रमण, अर्सासिदो के उदयोपरान्त अंधकार-युग, और ईरान पर अरब-विजय के कारण इनमें से अधिकांश कृतियां नष्ट कर दी गई।

कुछ समय पहले तक लेख-पत्रो की भाषा पहेली बनी थी। यद्यपि अब यह काफी हद तक पढ़ी जा चुकी है तथापि इसमें

पूर्ण प्रवेश अभी नहीं हो सका है। १८० वर्ष पूर्व यूरोप के तत्कालीन विद्वानों ने पश्चिमी एशिया में उस समय बोली जानेवाली भाषाओं के सहारे प्राचीन फ़ारसी के उत्स और उद्भव पर अपने अनुसंधान प्रारंभ किए। फ्रांसीसी विद्वान्, अंकेतिल दी पैरों, जिन्होने प्राचीन ज़ोरोस्ट्रियन ग्रंथ भी पढ़े थे, इन प्रयत्नों के अग्रणी बने।

इन गवेषणाओं के फलस्वरूप यह पता चला कि पश्चिमी चीन से अतलांतक समुद्र की विशाल भू-परिधि में व्यापक इण्डो-यूरोपीय भाषा-परिवार नाम का एक अत्यंत प्राचीन वंश से 'फ़ारसी' निकली है।

[ख] इतिहास के विभिन्न युगो मे फ़ारसी का मूल्य और महत्त्व

न केवल आधुनिक फ़ारसी के इतिहास की दृष्टि से अपितु भारत के भाषा संबंधी इतिहास की अच्छी जानकारी के लिए भी, यह आवश्यक है कि प्राचीन और आधुनिक फारसी पढ़ी जाय क्योंकि यह भारत और मध्य-एशिया की भाषाओं से तीसरे सहस्राब्द ई० पू० से १०वी शती ई० तक घनिष्ठ सूत्र में बँधी रही।

इस संबंध का कारण इस तथ्य में मिल सकेगा कि इस समस्त लम्बे काल में, जब भी ईरानी जातियो ने एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर प्रस्थान किया, या किसी देश पर आक्रमण किया, वे वहाँ अपने साथ अपनी भाषा भी लेती गईं। कालान्तर में फ़ारसी का प्रचार-क्षेत्र इतना अधिक संकुचित होने लगा कि अब यह केवल ईरान देश और उसके समीपवर्ती अफ़ग़ानिस्तान, ताजिकिस्तान, ईराक और काकेशिया भर में सीमित है।

अकेमीनियन युग में, तथा उनके आगमन के पूर्व भी, मीड-वश के राजत्व काल में, प्राय: ५ शतियो तक (७००–३०० ई० पू०), प्राचीन फारसी उस विशाल भू-क्षेत्र के लोगो की भाषा थी। पार्थियन (अर्सासिद) युग में (२५० ई० पू०–२०० ई०) भी वही भाषा कुछ सुधारो के साथ चलती रही।

प्रत्येक जीवित तत्व में विकास का सिद्धान्त क्रियाशील है। अत प्राचीन फारसी में भी, जो कि एक जीवित भाषा थी, काल-प्रवाह के साथ उदित होने वाली नई शक्तियो ने अत्यधिक परिवर्तन किए। अतएव अर्सासिदो के शासन-काल में मध्य फ़ारसी या 'पहलवी' का जन्म हुआ। इसका मूल-स्रोत एवं वश वही था जो प्राचीन फारसी का था परन्तु इसमें अपने युग के भाषा संबंधी हेरफेर प्रतिबिम्बित थे। काफी अर्से बाद, सासानी युग में, अर्सासिद पहलवी (पहलवी अश्कानी) पुरानी पड़ गई और सासानी पहलवी नामक नई भाषा में परिवर्तित हो गई।

सातवीं शती ई० में पहलवी भाषा को अरब (मुस्लिम आक्रमण का सामना करना पडा। परिणाम स्वरूप, इस पर अरबी भाषा का पर्याप्त प्रभाव पड़ा और धीरे-धीरे इसने अरबो द्वारा ईरान लाए गए हजारो नये शब्द, मुहावरे, प्रयोग और व्याकरण के नियम आत्मसात् कर लिए। इससे सेमिटिक भाषा का पहलवी पर प्रभाव जो कि एक प्राचीन आर्य भाषा है, निरंतर बढ़ता रहा है। पिछले १३५० वर्षो में फारसी उत्तरोत्तर अरबी की ओर झुकती गई है।

ईरान पर इस्लाम के आधिपत्य (९वी तथा १०वीं शती ई०) के प्रारंभिक दिनों के फ़ारसी ग्रंथों के अध्ययन से स्पष्ट हो जायगा कि उस समय की भाषा में और उस भाषा में जो ईरान में आज लिखी-बोली जाती है, अधिक अन्तर नहीं है, सिवाय इसके कि आज की अपेक्षा पहले वाली भाषा में विशुद्ध फारसी शब्दों, प्रयोगों और प्रकारों की संख्या अधिक थी।

इस दृष्टि से फारसी का बहुत कुछ साम्य अंग्रेजी से है। अंग्रेजी की ही तरह जो कि ऐंग्लो-सैक्सन (जर्मन भाषाएं) और लैटिन तथा ग्रीक का समिश्रण है, फारसी भी मध्य फारसी (सासानी पहलवी) और अरबी का सयुक्त रूप है। दूसरे शब्दो में, अकीमोनियन युग की प्राचीन फारसी मध्य फारसी की माता कही जा सकती है, जिसने स्वयं भी आधुनिक फारसी को जन्म दिया। सौभाग्य से, प्राचीन और मध्य फारसी में प्रचुर सामग्री उपलब्ध है जिससे यह विकास देखा जा सकता है।

[ग] प्राचीन फारसी

१. सर्वप्रथम, अकेमोनियन लेख-पत्र उपलब्ध हैं। उन्हें पढ़ने में कितनी भी अधिक दिक्कत हो, जो कुछ अब तक जाना जा सका है उससे प्रमाणित होता है कि इस प्राचीन भाषा में सुन्दरता, स्वच्छता और स्पष्टता के गुण थे।

सामान्यतः देव लेखपत्र' नाम से उद्धृत किए जाने वाले एक

लिखित विवरण मे जरक्सीज ने अपना धार्मिक क्रियाओ का उल्लेख इस प्रकार किया है।

"उता अतर ऐता दहयावा आह् यदा ला परुवम दैवा अयादीय पसाव वशना अहुरामज़दहा अदम अवम दैवदानम वियकनम उता पतियज़न्यम दैवा मा यदि-यैशा यदाया परुवम दैवा अयदीय अवदा अदम अहुरामज़दाम अयदैय।"

अनुवाद :

"और इन प्रदेशों में एक जगह पहले मिथ्या दैवों की पूजा की जाती थी। तब अहुरामज्दा की इच्छा से मैंने मिथ्या दैवों के उस गृह को खोद डाला और घोषित किया : तुम मिथ्या दैवों की पूजा मत करो। जहाँ पहले मिथ्या दैव पूजे जाते थे वहाँ मैंने अहुरा मज्दा की पूजा की।"[1]

यहाँ हमें मिलेंगे प्रसिद्ध शब्द दैव—'मिथ्या देवता, राक्षस'; बाद का देव (अब दीव); यद—'पूजा', 'यद' शब्द का शुद्ध फ़ारसी रूप...'यज्दाँ' का प्रयोग पूजा के अर्थ में जोरोस्ट्रियन ग्रंथों में हुआ है।[2]

२. सूचना की दूसरी स्रोत जोरोस्ट्रियन मत की धार्मिक पुस्तकें अध्येता को अध्ययन और अन्वेषण के लिए और भी अधिक सामग्री

---

१ देखो दि लिगेसी ऑफ पर्शिया, एच० डब्ल्यू० बेली—पृ० १८०

२ ,, ,, ,, ,,

प्रदान करती है। "उत्तरी इंगलैण्ड में रोमन दीवाल पर मित्रस् के प्राचीन मन्दिर में जानेवाले हम स्वभातः उतनी ही रुचि रखते जितने कि भारतीय, जो अपनी अत्यंत प्राचीन पुस्तकों में 'मित्रस' अथवा वाद में भारत के शक आक्रान्ताओं के विवरणों में 'मिहिर' के विषय में यह जानने के लिए पढ़ते हैं कि प्राचीन जोरोस्ट्रियन पुजारियों ने उनके 'यज़त' (इज़द, 'पूज्य तत्व'), मिथ्र के संबंध में क्या कहा है। अवस्ता में यश्त की पुस्तक में, जो कि धार्मिक गीतों का संकलन है, मिथ्र के सम्मान में निम्नलिखित छंद प्राप्त होते हैं :

Miθrəm vouru.gaoyaoitīm yazamaide
yō paoiryō mainyavō yazatō
tarō Harąm āsnaoiti paurva.naēmāt̲
aməšahe hū yat̲ aurvat̲.aspahe
yō paoiryō zaranyō.pīsō
srīrå barəšnava gərəwnāiti
aδāt̲ vīspəm ādiδāiti airyō.šayanəm səvištō

: अनुवाद .

"हम उस मिथ्र की पूजा करते हैं जिसके पास बड़े-बड़े चरागाह हैं, जो आध्यात्मिक जगत का पूज्य जीव है और यथापूर्व 'हरा पर्वत' पर तेज घोड़ों वाले अमर सूर्य के सामने से हमारी ओर

आता है; जो, ययापूर्व स्वर्णमण्डित सुन्दर गिरि शिखरों को पकड़ लेता है और सर्वशक्तिमान् की तरह वहाँ से समस्त आर्य-गृह पर दृष्टि प्रक्षेप करता है।"[1]

यह स्मरण रखना चाहिए कि जब पश्चिमी और दक्षिणी ईरान में फारसी बोली जाती थी, प्रायः उसी समय देश के पूर्वी और उत्तर-पूर्वी भागों में एक दूसरी भाषा व्यवहृत होती थी। यह संस्कृत और प्राचीन फारसी के समानांतर थी और तीनों भाषाएँ बहनों की तरह रहती थीं। इस भाषा को 'अवेस्ता' भाषा कहा जाता है क्योंकि ईरानी पैग़म्बर ज़रथुष्ट्र की धार्मिक पुस्तक अवेस्ता इसी भाषा में है।

क्योंकि मेरा इरादा बाद में उक्त पुस्तक पर सविस्तार बोलने का है, यहाँ केवल यह कह देना पर्याप्त होगा कि अवेस्ता-भाषा संस्कृत से बहुत घनिष्ठ रूप से संबन्धित है। यह संबंध निम्न-लिखित एक स्रोत में सुप्रत्यक्ष है : पितर—'फादर', 'पिदर'; मातर—'मदर', 'मादर'; आप—'वाटर', 'आब'; कर—बनाना, 'टु मेक', 'करदन'; राम—'टु रेस्ट', 'आरमीदन'; पुत्र—'सन', पूर; हजार—'थाउज़ेंड', 'हज़ार', आदि शब्द प्राचीन भारतीय ग्रंथो में आनेवाले शब्दों से साम्य रखते हैं। इसी तरह भारतीय 'अश्वम्' (घोड़ा—'हार्स') और ईरानी 'अस्य' भी है।[2]

---

१ देखो . दि लिगेसी ऑफ पर्शिया एच० डब्ल्यू० बेली—पृ० १६१
२. " " " " —" ८१२

प्रायः दो शताब्दियों के कठिन अध्ययन और गवेषण के उपरांत अब भाषाशास्त्री इस निश्चय पर पहुँचे हैं कि प्राचीन फारसी और संस्कृत दो बहन-भाषाएँ हैं जो कि इण्डो-यूरोपीय भाषाओं के एक ही और बहुत प्राचीन वंश से निकली हैं; जर्मन, स्लॅव, यूनानी भाषाएँ भी इसी परिवार की हैं।

[घ] मध्य फ़ारसी

अर्सासिदों के राज्यकाल में, प्राचीन फारसी में परिवर्तन हुआ और वह पहलवी भाषा के रूप में अथवा मध्य फारसी के रूप में विकसित हुई। मनीकीइज़्म[३] और ईसाइयत के ग्रंथों (पूर्वी चर्च की पाण्डुलिपियों) के तुलनात्मक अध्ययन और समरकन्द के समीप की घाटी में प्रचलित 'सोग़दी' बोली के अध्ययन के उपरान्त भाषा-विज्ञान के शास्त्रियों ने यह मत स्थापित किया है कि अर्सासिद पहलवी उस भाषा से भिन्न है जो इसके पूर्व अकेमीनियन युग में थी, अर्थात् सासानी पहलवी। इधर के वर्षों में पुरातत्वात्मक उपलब्धियों और नई धार्मिक कृतियों (मनीकियन मत की) की खोज से इस भाषा का परिज्ञान और भी सुगम हो गया है; विशेष

---

३ मानी या मानस नामक एक ईरानी पैगम्बर, जिन्हें 'प्रकाश का दूत' कहा जाता है, द्वारा प्रचारित एक मत का नाम है मनीकियनिज़्म। यह मत बेबीलोनिया से फैला और चतुर्थ शताब्दी में साम्राज्य में व्यापक रूप से प्रभावशील था—एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका।

कर मध्य-एशिया में, समरकन्द और ख्वारज्म के पड़ोस में, खोदे गये अवशेषो तथा यूरोपियन पुस्तकालयों अथवा भारत में पारसी सम्प्रदाय के पास सुरक्षित अनेक पाण्डुलिपियों के कारण। ये साक्ष्य भी सासानियों की भाषा अर्थात् सासानी पह्लवी (जो कि अर्सासिद पह्लवी के पश्चात् आई) सबंधी ज्ञातव्य बातों पर पर्याप्त प्रकाश डालते है। इस प्रकार, जो फ़ारसी शब्द आज विद्यमान है वे पिछले २,५०० वर्षों के बीच परिवर्तन की एक शृंखला में से गुज़र चुके है; उदाहरण के लिए, प्राचीन फारसी शब्द 'तपयति' जिसका अर्थ है 'प्रकाश विकीर्ण करना', अर्सासिद पह्लवी में 'तापेत' और सासानी पह्लवी में 'तफस्तोन' या 'तबिद' हो गया है। आधुनिक फारसी में इसका रूप है 'ताविश' और 'तावीदन'।[1]

सासानी युग का अत होते-होते (छठी, सातवीं शती ई०) पह्लवी भाषा इतनी परिपूर्णता प्राप्त कर चुकी थी कि उस समय भी यह ईरान की आज की 'कुर्दी' और 'पश्तो' जैसी भाषाओं से बढ-चढकर थी क्योंकि इसका अपना प्रचुर साहित्य था; अर्थात् पह्लवी की साहित्यिक वश-परपरा महत्त्वपूर्ण है और इस समय जो भी ग्रथ प्राप्त है वे अत्यधिक साहित्यिक और ऐतिहासिक मूल्य के तथा गभीर महत्व के है।[2]

---

१ दि लिगेसी ऑफ पर्शिया—पृ० १८६

२ ,, ,, ,, ,,

जो पहलवी पुस्तकें हमें सुलभ हो सकी हैं मुख्यतः तीन प्रकार की हैं :

(१) जोरोस्ट्रियन् धर्मग्रंथ और पुस्तकें, (२) शिलालेख और (३) सासानी सिक्के, जिनमें उक्त वंश के राजाओं के नाम तथा उपाधियां हैं।

उसी प्रकार, इस्लाम के प्राथमिक युग (अर्थात् ईरान के अरब आक्रमण के ठीक बाद) में लिखी गई फारसी पुस्तकें पहलवी की प्रगति पर पर्याप्त प्रकाश डालती हैं।

[ङ] आधुनिक फ़ारसी

परंतु तीसरी शती हिजरी अर्थात् ९वीं शताब्दी ई० के आगे पहलवी आधुनिक फारसी के रूप में विकसित होने लगी। अरबी से नये, पारिभाषिक शब्द और मुहावरे लिए गए। धीरे-धीरे ध्वनि तथा शब्दोच्चारण में भी परिवर्तन हुआ एक नई वर्णमाला तथा वर्ण समाम्नाय चलाई गई। पहलवी के बाद जो अरबी-लिपि आई वह अब भी ईरान में प्रचलित है।

तीन शताब्दियों के मिश्रण के उपरान्त आधुनिक फारसी तीसरी शती हिजरी के अन्त में एक स्वतंत्र भाषा के रूप में सुस्पष्ट हो उठी। इस शताब्दी में, जब कि अरबी भाषा का प्रसार अवरुद्ध हो गया था और स्थानीय राजवंशों ने ईरान में स्वतंत्र राज्य स्थापित कर लिए थे, एक नवीन राष्ट्रीय साहित्य का विकास हुआ।

सफारियों के राज्यकाल में, जो सीस्तां में ८५० ई० में सत्तारूढ़ हुए, और समानियों के समय में जो मध्य-एशिया में, बुखारा में व्यवस्थित हुए (६०० ई०), आधुनिक फारसी के गद्य और पद्य की नींव पड़ी। फारसी साहित्य का इतिहास वस्तुतः इसी युग से प्रारंभ होता है। इस युग की शोभा बढ़ानेवाले कवियों में बोखारा के 'रोदकी' जैसे प्रसिद्ध फारसी कवि हुए जिन्हें फारसी काव्य का जनक कहा जाता है (१०वीं शती ई० का पूर्वार्द्ध)। कलेलाह्-व-दिमनाह् (मूलतः पंचतंत्र) जैसा ग्रथ जो पहले पहलवी से अरबी में ७५० ई० में अनूदित हुआ था (कालीलक-ओ-दिमनक), पुनः १२वीं शताब्दी में फारसी में अनूदित किया गया।

क्योंकि फारसी गद्य और काव्य पर, मैं अपने आगे के व्याख्यानो में कुछ कहूँगा, यहाँ १०वी तथा १२वीं शती में लिखित दो फ़ारसी पुस्तकों का उल्लेख करके समाप्त करना समीचीन होगा। दोनों पूर्वी ईरान में लिखी गई थीं। यह ध्यान देने योग्य बात है कि प्रथम कृति के प्रमुख गुण है भाषा की सरलता और स्वच्छता, जब कि दूसरी कृति के उद्धरण से विदित होगा कि किस प्रकार अरबी शब्द और प्रयोग मिश्रित किए जाते थे। दोनों उद्धरणों का विषय एक है, अर्थात् कैसे कलेलाह्-व-दिमनाह् (पचतत्र) भारतवर्ष से ईरान ले जाया गया और पहले पहलवी तदनन्तर अरबी में अनूदित किया गया। मैंने यह वस्तु जान-बूझकर चुनी है क्योंकि भारत और ईरान के संबधो में यह एक प्रख्यात विषय है।

१. १०वीं शती की फ़ारसी भाषा का रूप :—

'शाहनामा'

मन इमरोज़ दर दफतरे हिन्दुआ
हमी विनग्रीदम वरीशन रवा
नविश्ता चुनी बुद कि दर कोहे हिन्द
गयाहेस्त रखशा चो रोमी प्रिन्द
चो वर मुर्दा विप्रागनी वेगुमा
सुखनगोये गदर्द हम अन्दर ज़मा
वगोयम कनूं आँचि मा रा रसीद
दिले राद वायद कि दाना शुनीद
वदानिश वुवुद वेगुमा ज़िन्दा मर्द
खुनक रंज वरदार पायदा मर्द
चो मर्दुम ज़ दानाई आमद सतोह
गया चू कलेलास्त व दानिश चो कोह
किताबे वदानिश नुमाइन्दा राह
वयावी चोजोई तू अज गज शाह
ज़िराह चू रसीद अन्द्रा वारगाह
न्यायश कुना रफ्त नज़दीके शाह
वदो गुफ्त शाह ऐ पसदीदा मर्द
कलेला रवाने मरा ज़िन्दा कर्द
नविशतिन्दाये नामाए खुसरवी

नवुद आज़मा खत वजुज़ पहलवी
चुनी ता वताजी सुख़ुन रानदद
अजा पहलवानी हमी खानदद
चोहारू जहा रोशनो ताजा कर्द
चुनी नामावर दीगर अदाजा कर्द
कलेला वताज़ी शुद अज़ पहलवी
वदीसा कि उकनू हमी विशनवी[1]

२. १२वीं शती की फारसी-भाषा का रूप :—

कलेलाह-व-दिमनाह वहराम शाही से

यके अज़ आहमाये हिन्द पुरसीदन्द कि मी गोयन्द कि वजा-निवे हिन्दुस्ता कोहास्त व दर वै दारूहा मी रोयद कि मुर्दा वदा ज़िन्दा मीगवद तरीके वदस्त आमदने आ चेह वाशद जवाव दाद ई सुख़ुन अज़ इशारात रमूज़ मुतकद्दमानस्त व अज़ा कोहहा उलेमा रा खास्ता अद वआदारूहा सुखने ईशा रा व आ मर्दगाने जाहिला रा कि व समाये आ ज़िन्दा शवद व दमिस्ते इल्मे हयाने अवद यावन्द व ई सुखन रा मजमूआ एस्त कि आरा कलेलाह व दिमनाह खानन्द व दर खज़ायने मलूके हिन्द वाशद अगर वदस्त तवानी आवुर्दन ई गरज़ वहसूल पैवदद व महामन रा निहायत नीस्त ।

---

१ शाहनामा—नौशीरवा का राज्य

दर नौबते अबू जाफर मन्सूर कि दुवुम खलीफा बूदास्त अज खानदाने अम्मे मुस्तफा इब्नुलमुकफ्फा आरा अज जुबाने पहलवी व लुगते ताजी तर्जुमा कर्दो आ पादशाह वदा इकवाले तमाम नमूद।[1]

[च] सारांश

फारसी पाँच सोपानो से गुजर चुकी है:

१. मीड लोगो की अत्यत प्राचीन फारसी—यह अकेमीनियन युग के पहले हुई और पश्चिमी ईरान में बोली जाती थी। मीड-वंश के शासनकाल में हग्मतना (हमादान) जिले में यह लोकभाषा थी। अब तक इसके स्पष्ट चिह्न नहीं ज्ञात हो सके है।

२. अवेस्ता-भाषा, जिसे "जन्द और अवेस्ता" की भाषा भी कहा जाता है। अकेमीनियन-वश के आगमन के पहले यह भाषा ईरान में विद्यमान थी और देश के पूर्वी भागों में बोली जाती थी। जोरोऐस्टर (जरतुश्त) की कुछ गाथाएँ जो इस भाषा में है, सुरक्षित है। इन गाथाओ में मत्र है, जो कि सम्भवतः पूर्वी ईरान की किसी जनपदीय भाषा में है और अपनी स्वतत्र वर्णमाला तथा लिपि में लिखे गए है। गाथाओ की पुस्तक ही जोरोस्ट्रियनो (जरतुश्तियो) का एकमात्र धर्मग्रथ है जो बचा रह सका है। पहलवी में लिखी गई इसकी टीका का नाम 'जेन्द' है और बाद में आधुनिक फारसी में जेन्द पर लिखी गई टीका का नाम है 'पाजेन्द'।

---

१ कलेलाह व दिमनाह, करीब एडीशन, तहरान, पृष्ठ १८।

अवेस्ता भाषा संस्कृत और प्राचीन फारसी के समानांतर है और ये तीनों भाषाएँ बहनों के समान हैं।

३. प्राचीन फारसी अथवा दक्षिणी ईरान या फारस (फारस खास) में अकेमोनियनों द्वारा बोली जाने वाली भाषा। इस युग के सभी लेख इसी भाषा में हैं और चित्र-लिपि में शिलाओं पर, महलों में प्रयुक्त प्रस्तर-खण्डो, अन्य स्मारकों, मुद्राओं और सिक्को पर खुदे हैं।

यह भाषा महान् ईरानी राजाओं साइरस तथा डैरियस द्वारा बोली जाती थी। बाद में अवेस्ता भाषा को इसने आक्रान्त कर दिया।

४. पहलवी, अर्सासिदो और सासानियों की भाषा, पार्थियनों के राजत्व काल में उदित तथा उन्नत हुई और सासानी-वंश के अंतर्गत अपना नाम बनाये रही। सासानी युग में यह पूरे ईरान में फैल गई और देश के मध्य तथा दक्षिणी भागों में विशेषतया लोकप्रिय रही।

पहलवी शब्द भारतवर्ष में 'पहलव' में स्थिर है। आधुनिक फारसी साहित्य में इसका स्मरण दिलाने वाले शब्द हैं—पहलवानी (वीर), सखुन गुफ्तन पहलवी, गुल्बांगे पहलवी।

पहलवी में 'हुजवारिश' या विचारबिम्ब का होना एक विशेषता है। असीरियन, अरेमैक या हिमियाराइट (मेसोपोटामियन) मूल की अथवा सेमिटिक-वंश की प्राचीन भाषाओं के शब्द पहलवी

पुस्तकों में अपने मौलिक रूप में लिखे जाते थे, परंतु पढ़ते समय उसका पहलवी तात्पर्य (न कि लिखित शब्द) उच्चारित किया जाता था, जैसे--'शाहिनशाह' शब्द जो कि ईरानी राजा की परपरा-गत उपाधि है, पहलवी में लिखा जाता था 'मलकाने मलका' अर्थात् अरबी के 'मलिकुल-मलूक' का असीरी समानार्थक; परंतु पढ़ते समय इसका पहलवी अर्थ 'शाहिनशाह' उच्चारित किया जाता था, न कि "मल्काने मलका"।

पहलवी के अनेक ग्रंथ तथा पत्र अभी बचे हुए हैं परंतु उन्हें सरलतापूर्वक पढ़ सकना असम्भव है।

५. आधुनिक फारसी, या ईरानी पठार के वर्तमान निवासियो द्वारा बोली जाने वाली भाषा। इसका आगमन ईरानी इतिहास के द्वितीय खण्ड में, अर्थात्–इस्लामोत्तर युग में हुआ। इसे अरबी लिपि में लिखा जाता है। अब इसका १ हजार वर्ष का इतिहास है जिसका प्रारंभ उस समय हुआ जब बुखारा के रौदकी ने पहले पहल अपने उद्बोधन गीत गाए अथवा फिरदौसी ने अपना शाहनामा रचा। इस लंबी अवधि में इसमें अत्यल्प परिवर्तन हुए हैं और इस भाषा में लिखी गई ६वीं शताब्दी की पुस्तकें सुगमतापूर्वक अब भी समझी जा सकती है।

मानचित्र

फ़ारसी भाषा के उद्भव और विकास और अन्य आर्य भाषाओं से इसका संबंध
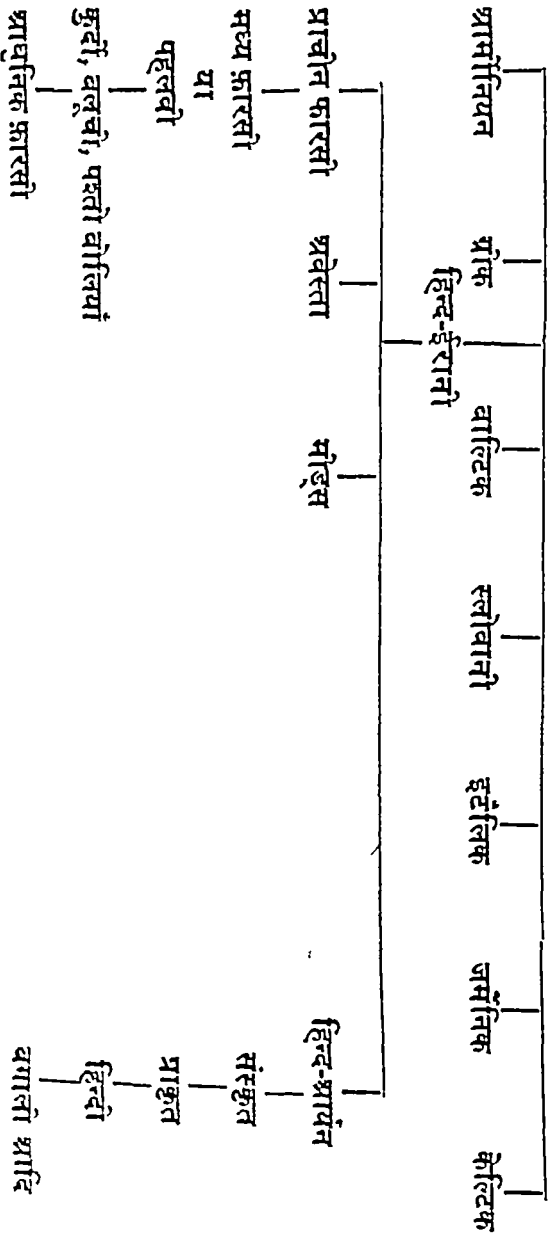
तृतीय व्याख्यान

*

इस्लामपूर्व गद्य

*

रूपरेखा

[१] प्राचीन फारसी

अकेमीनियन-युग तथा पूर्व की शताब्दियाँ

(अ) अवेस्ता : सामान्य परिचय।
अवेस्ता के भाग।
अवेस्ता की खोज और उसके आधुनिक अनुवाद।

(ब) शिलालेख : डैरियस महान का बी-सितून शिलालेख

[२] पार्थियन और सासानी-युग

(अ) विद्यामान लिखित सामग्री : धार्मिक, नैतिक, ऐतिहासिक ग्रंथ।

(ब) पहलवी से अरबी में अनुवाद : अलतबरी इब्नुल मुक्फ़ा
फिरदौसी :
शाहनामा, खुदाईनामा

(स) पहलवी साहित्य के उदाहरण : जावीदान खिरद

[३] सारांश
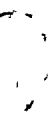
[१] प्राचीन फारसी (अकेमीनियन युग और पूर्व की शताब्दियाँ)

ईरान के गद्य और काव्य का प्राचीनतम लिखित रूप 'अवेस्ता' में प्राप्य है, जिसके लेखक ईरान के प्रसिद्ध पैगम्बर 'जरथुष्ट्र' माने जाते हैं। इस विचारक-पैगम्बर के जीवन के विवरण अज्ञात है, परतु अनुमान लगाया जाता है कि वह ७वीं शताब्दी (ई० पू०) में हुए थे।

(अ) अवेस्ता

उस प्राचीन काल में ईरान के पूर्व में प्रचलित एक पुरानी बोली में अवेस्ता लिखी गई है। यह प्राचीन फारसी तथा सस्कृत के समानातर है और तीनो भाषाएँ बहनें मानी जाती हैं। बहुत सभव है कि यह बोली खुरासान क्षेत्र में बोली जाती रही हो।

'अवेस्ता' प्रार्थनाओ और धार्मिक शिक्षाओ का एक संकलन है। यह एक वृहद् ग्रथ का एक खड था। मूल धर्मग्रथ के अन्य भाग कराल काल के हाथों नष्ट हो गए। कहा जाता है कि वर्तमान अवेस्ता उक्त पुस्तक का एक-चौथाई भाग है जो कि १०वीं शताब्दी ई० तक अवश्य उपलब्ध थी।

अवेस्ता के कई भाग हैं; जिनमें प्रमुख हैं :

१. यस्ना
२. यश्त

प्रथम में कुछ मत्र और स्तुतियां हैं। द्वितीय, ईरान के प्राचीन देवताओ के प्रति प्रार्थनाओ और आवाहनो का संग्रह है।

अवेस्ता का एक तृतीय भाग है, अर्थात् 'वन्दिदाद,' जिसमें पूजन-विधान और धार्मिक कृत्य वर्णित हैं। अंत में, कुछ विविध विषयक अपूर्ण खण्ड हैं जिन्हें 'खुर्देह-अवेस्ता' कहा जाता है।

सर्वप्रथम एक फ्रांसीसी प्राच्य शास्त्री अन्केतिल दे पेरां ने इस पुस्तक का १७७१ ई० में महत्व ज्ञात किया और इसे फ्रांसीसी भाषा में अनूदित किया। इस प्रकार उन्होंने विद्वानो का ध्यान इस ओर दिलाया।

(ब) शिलालेख

अपने नामों को भविष्य की पीढ़ियो तक बनाए रखने के इच्छुक अकेमीनियन राजाओं ने 'मेख़ी' लिपि में अनेक शिलालेख खुदवाए। फलस्वरूप इस युग का गद्य प्रचुर मात्रा में इस समय सुलभ है।

जहाँ तक इस गद्य के उदाहरण का प्रश्न है, किरमानशाह से कुछ मील दूर स्थित बिसितून में प्राप्त एक शिलालेख का यह अपूर्ण खण्ड उस युग की शैली का सर्वोत्तम प्रतिनिधि है। यह मेख़ी लिपि में लिखा हुआ है और सर्वप्रथम १८३७–४३ में सर हेनरी रॉलिसन द्वारा पढ़ा गया था। तत्कालीन तीन भाषाओं—बेबीलोनियन, एलामाइट और प्राचीन फारसी में यह डैरियस महान् की आज्ञा से (५२० ई० पू०) खुदवाया गया था। अनुत्तरदायी टाँग अड़ाने वालों के हस्तक्षेप से यह लेख सुरक्षित रह गया है,

क्योंकि यह लेख एक ठोस शिला पर तथा काफ़ी ऊँचाई पर खुदा है। यह जानना रोचक है कि यह लेख तीन भाषाओं में लिखा गया था। इस प्रकार इसने चित्रलिपि की वर्णमाला की खोज का और साथ ही तत्कालीन अन्य सभी लेखों के पढ़ने का संकेत दिया।

यह लेख एक ऐतिहासिक विवरण ही नहीं है बल्कि इसे एक साहित्यिक अवतरण भी माना जाता है। किसी विद्वान् ने कहा है:

"तथापि भाषा-विशेषज्ञ और इतिहासकार दोनों के लिए अकेमीनियन स्मारकों के ये लिखित अवशेष अत्यधिक मूल्यवान् हैं।"[1]

फिलहाल उस लेख का मूल पाठ नहीं, उसके एक भाग का अनुवाद ही मैं यहाँ दे रहा हूँ ताकि आपको अकेमीनियन गद्य की धारा तथा शैली का कुछ परिचय प्राप्त हो जाय:

"राजा डेरियस ने कहा: जो राज्य हमारे वंश से वियुक्त कर दिया गया था उसे मैंने पुनः अर्जित किया: उसे मैंने उसके स्थान में स्थापित किया: पहले-सा ही मैंने इसे बना दिया· मैजियन गौमट ने जिन मंदिरों का विध्वंस कर दिया था—उन्हें, और बाजार, पशु वृन्द तथा जाति-अनुसार बने हुए आवास भी, जिन्हें मैजियन गौमट ने उनसे छीन लिया था, मैंने जनता को वापस दिये। मैंने लोगों को उनकी पहली जगहों—फारस, मीडिया तथा अन्य प्रांतों में संस्थापित किया। इस प्रकार मैंने अपहृत वस्तुओं को पूर्ववत् बना दिया: यह

१ दि लिगेसी ऑफ पर्शिया; बेली—पृ० १७४।

मैंने अहुरमज़्दा की कृपा से किया है। मैंने जब तक अपने क़बीले को यथापूर्व व्यवस्थित न कर लिया, तब तक परिश्रम किया, इस तरह अहुरमज़्दा की कृपा से मैंने अपने कबीले की स्थिति पहले जैसी कर दी जब कि मैजियन गौमट ने इसे ध्वस्त नहीं कर डाला था। राजा डैरियस ने कहा : राजा होने पर मैंने ये कार्य किए[1]"

[२] मध्य फ़ारसी या पहलवी

पहलवी का जन्म पार्थियन अथवा अर्सासिद युग (२५० ई० पू०–२२६ ई०) में हुआ। सासानी शासन-काल (२२६–६४० ई०) के अंतर्गत यह विकसित हुई, इसने पूर्णता प्राप्त की और इसमें आलोकपूर्ण साहित्य लिखा गया। अरब-आक्रमण के बाद प्रायः तीन शताब्दियों तक यह भाषा और साहित्य ईरान के कुछ एकान्त भागों में जीवित रहे। पश्चात् काल में इसका व्यवहार उन विदेशगामी ईरानियों के मंडल तक सीमित रह गया, जो दक्षिण-पश्चिमी भारत की ओर गये और ७वीं या ८वीं शती में गुजरात में बस गए। इस पलायन का कारण था उस समय अरब-सेनाओं द्वारा ईरान का विध्वंस। यह अब भी किसी हद तक उनमें विद्यमान है।

---

१. देखो ब्राउन . फारस का साहित्यिक इतिहास, प्रथम खण्ड– पृ० ३२।

१३ शताब्दियो (३री शती ई० पू० से १०वीं शती ई०) तक प्रसृत इस भाषा के लिखित उदाहरण लेख-पत्रो, मुद्राओ, पुस्तकों तथा अन्य विविध अपूर्ण खण्डों में बिखरे हुए है।[1]

(अ) विद्यमान लिखित सामग्री

सम्प्रति विद्यमान पहलवी साहित्य को स्थूल रूप से चार भागो में बाँटा जा सकता है:

(१) अवेस्ता का 'ज़न्द' नामक अनुवाद।

(२) धार्मिक पुस्तकें, जिनमें कि दीनकार्त या 'धर्म के कार्य, सबसे अधिक प्रसिद्ध तथा महत्त्वपूर्ण है। इसमें जोरोष्ट्रियनो या मज़्दा-पूजको के रीति-रिवाजो, परंपराओ, संस्कारों एवं साहित्य के विषय में विशाल सूचना-विवरण सन्निहित है। यह कुतूहलजनक बात है कि इस सग्रह का संकलन ९वीं सदी ई० में हुआ, अर्थात् ईरान पर अरब (मुस्लिम) आधिपत्य के ५० वर्ष बाद।

(३) कथाएँ और इतिहास की पुस्तकें—इनमें से कुछ, जैसे 'वसाया' (मृत्युकाल के आदेश), या 'खुसरो कवातान' (खुसरो-ए-कुबातान की कथाएँ), और 'कारनामक-इ-अर्दशेर बाबकान' (कार-नामक-इ-अर्तक्षित्र-इ-पापकान') अब तक समग्र रूप से विद्यमान है। अंतिम पुस्तक में सासानी-वंश के सस्थापक की जीवनी है।

---

१. ई० जी० ब्राउन कृत फारस का साहित्यिक इतिहास, खड १ —पृ० १०३।

(४) भूगोल, परम्परागत जीवन, तथा साहित्य आदि पर अन्य विविध पुस्तकें—पहलवी साहित्य के वृहद् अंश की निर्मात्री ये पुस्तकें १९वीं शताब्दी से प्रायः शास्त्र-वेत्ताओं का ध्यान आर्कषित करने लगीं। पहलवी पुस्तकों के अनुवाद, व्याख्या और सपादन की ओर जर्मन प्राच्यविशारदों ने विशेष ध्यान दिया है। इस दिशा में प्रसिद्ध प्राच्यशास्त्राचार्य प्रोफेसर थियोडोर नोल्डेक ने पहलवी पुस्तकों को पढ़ने में बहुत कठिन श्रम किया। उनकी कृतियां मूल्यवान् और विश्वसनीय हैं।

(ब) पहलवी से अरबी में अनुवाद

दूसरी ओर इस्लामोत्तर युग की प्रथम चार शताब्दियों (७वीं से १०वीं ई०) में अनेक पहलवी पुस्तकें अरबी में उन ईरानियों द्वारा अनूदित की गईं, जिन्हें दोनो भाषाओं पर पूरा अधिकार था। सौभाग्य से उनके कुछ ग्रंथ अब भी विद्यमान हैं।

इतिहास और धर्म-निरुक्त की दो सुविख्यात पुस्तको के लेखक 'अलतबरी' अत्यंत गण्यमान्य अनुवादको में से थे (मृ० ३१० हिजरी/९२३ ई०)। इनके पहले 'इब्नुल मुकफ्फा' (मृ० १४२ हि० / ७६० ई०) हुए थे, जिन्होंने कई पहलवी पुस्तको को अरबी में अनूदित किया। कलीलाह-वे-दिमनाह नामक पुस्तक, जिसका अनुवाद सस्कृत (पचतत्र) से पहलवी में एक फारसी वैद्य 'बुरजोई' द्वारा पहले किया जा चुका था, भी इब्नुल मुकफ्फा द्वारा अरबी में अनूदित की गई।

सौभाग्य से यह पुस्तक अक्षत और त्रुटिहीन बच गई है। (अपने व्याख्यानो में इन अनुवादो का हवाला मैं प्रायः दूगा)।

अततः 'खवताए नामक' या 'खुदाईनामा' नाम की एक पहलवी पुस्तक थी जो बाद में फारसी काव्य में रूपांतरित की गई और अन्य पहलवी मूलो के साथ अबुल-कासिम फिरदौसी द्वारा 'शाहनामाए फिरदौसी' नामक उनके महाकाव्य में सम्मिलित कर ली गई। दुर्भाग्य से खुदाईनामा अब अप्राप्य है। इसमें प्राचीन ईरान की कथाएँ थीं और यद्यपि पुस्तक लुप्त हो गई है, तथापि इसकी वस्तु तथा इसका साराश शाहनामा में फिरदौसी ने बहुत श्रम और ध्यान लगाकर पूर्णत. बचा लिया है। संसार के महाकाव्यो में शाहनामा की गणना है। इसमें प्राचीन ईरान का पौराणिक इतिहास वर्णित है जो इतने विस्तार से अन्यत्र कहीं नहीं दिया गया है।

(स) पहलवी साहित्य का एक उदाहरण

मुझे खेद है कि समयाभाव-वश मैं पहलवी ग्रथो से लंबे उदाहरण न दे सकूगा परतु जिन्हें रुचि हो वे बबई में अकेलसारिया, दानशा और अन्य फारसी विद्वानो द्वारा, तथा यूरोप में फ्रासीसी, जर्मन, और अग्रेज प्राच्यविशारदो द्वारा प्रकाशित पुस्तको का अध्ययन करें।

फिर भी 'जावीदान खिरद' (शाश्वत ज्ञान) नामक पुस्तक से मैं एक प्रश उद्धृत करूँगा जो मूल पहलवी से अल मामून (मृ० ८१३

ई०) के वजीर हसन बिन सहल (मृ० २३६ हिजरी) द्वारा अरबी में अनूदित की गई थी।[1]

यह उदाहरण तत्कालीन नीति-साहित्य का प्रतिनिधि है। इस उदाहरण में पहलवी के वास्तविक शब्दों का अभाव भले ही हो और उनकी मूल ध्वनियाँ भले ही प्राप्त न हो तथापि तत्कालीन आचार संबंधी शिक्षाओं तथा जीवंत विचारों का इसमें प्रतिनिधित्व मिलेगा। इस पुस्तक में अपने पुत्र के प्रति पेश्दादी होशग के आदेश हैं।[2] उद्धरण प्रस्तुत है :

(१) आगाज़ो अन्जाम वसूये यज़दाने पाकस्त व यारी अज़ोस्त सितायश ऊरा सज़ास्त, हर आकू आगाज रा शिनाख्त सितायश पेशा कर्द व आकि अज अजाम आगाही याफ्त बन्दा शुद। हरकि यारी अजू दानिस्त फिरोतन गश्त। कसे कि अज दादोदिहशे वै आगाह शुदव बन्दगी गर्दन निहाद व अज सरकशी चश्म पोशीद।

(२) बेहत्रीन चीजे कि अज खुदा व बन्दा रसद दानिशे ईं जहान व आमर्ज़ेश आ जहानस्त। खुशत्रीन आर्जू कि बन्दा अज़ खुदा दारद तन्दरूस्तीस्त। नेकोत्रीन सुखनाने सितायशे यजदाने पाकस्त।

---

१ देखो—अल-हिकमतुल-खलेदेह, काहिरा–१९५२। पारसीए नग्ज़, तेहरान, १३३०।

२ देखो—जलालुद्दीन मिर्जा कृत नामेह खुसरोवाँ—तेहरान।

(३) खूये बन्दगाने यजदां व चहार पाया पसंदीदा वर जास्त दानिश, बुर्दबारी, पाकदामनी दाद। दानिश व नेकोई बराय दस्तयाफतन बनेकोईस्त व दानिश व बदकारी बराय परहेज अज़ आनस्त। दानिशो किरदार चूँ जानो तनद, दानिश बेखरत व किरदार बर। दानिश पिदरस्त व किरदार पिसर, दानिशे बे किरदार पसन्दीदा नबाशद व किरदार बे दानिश ब अन्जाम न रसद।

(४) तवांगरी दर बे न्याजीस्त, आसायश दर गोशानशीनीस्त, आजादी गुजश्तन अज ख्वाहिशहाय जियाकार, रास्ती दर दरुस्तकारी व बजुर्गवारी दर बेख्वाहिशी।

(५) बस आवर आजमनगी न अज दिले खुद ता बाज गुवद बदे पाय तो व आसायश याबद तने तो। मितमकार पशेमानस्त अगर मितायश कुनद व मितमकश आसूदास्त अगरचि सरजनश नुमायद॥

(६) मुदनत नजदीकस्त व दर दस्ते तो नीस्त। रुजो शब व तुदी दर गुजरद दमे नगुजरद कि रोजगार बिगुज़रद, गिरामी-दार मर्गे खुद रा व पैवस्ता निगरा बाश ऊ रा। हगामेकि आसायश तन दा तो खू कर्द अज मर्ग बयन्देश, दमेकि अज आसायश सुरानूद गर्दी अदोहगी बाश अज रञ कि बाज़गश्ते आसायश बसूये ऊस्त॥

(७) न ब आर्जू बे नियाज तवां शुद, न बखुदआराई जवां, न ब दार तनदरुस्त। मगर हुश चहार चीज बाशद दर गीती

बरखुरदार ख़्वाही बूद। नाने कि अज़ कारे खुद बदस्त आरी, पायदारी दर दोस्ती, रास्तगोई व पाकदामनी।

: अनुवाद .

१. आदि और अन्त ईश्वर में अवस्थित हैं और वह समस्त सहायता का स्रोत है। वह प्रशसार्ह है। जिसने (सृष्टि का) आरंभ समझ लिया वह उसका गुणानुवाद करने लगा और जिसने अंत समझ लिया वह उसका दास हो गया। जिसने केवल मात्र उसी से मिलने वाली सहायता को जान लिया वह विनीत हो गया। जो उसके औदार्य और दाक्षिण्य को जान गया उसने अहंकार त्याग कर उस सर्वशक्तिमान् के प्रति आत्मार्पण कर दिया।

२. मनुष्य को ईश्वर से जो सर्वोत्तम वस्तु प्राप्त हुई वह है इस संसार का ज्ञान और परलोक में क्षमा। ईश्वर से मनुष्य अपनी सर्वाधिक सुखद कामना—स्वास्थ्य की याचना करता है। ईश्वर की स्तुति में कहे गए वचन ही गंभीरतम हैं।

३. ईश-सेवकों का चरित्र चार प्रशंसनीय सिद्धान्तों पर आधृत है: ज्ञान, क्षमा, पवित्रता, न्याय। गुण का ज्ञान—उसे पाने के निमित्त; पाप का ज्ञान—उस से बचने के लिए। ज्ञान और कार्य आत्मा तथा शरीर की तरह हैं। ज्ञान मूल है और कार्य फल। ज्ञान पिता है और कार्य पुत्र। निष्क्रिय ज्ञान प्रशंसनीय नहीं है; ज्ञान-शून्य क्रिया व्यर्थ है।

४. संतोष ही धन है, एकान्त में शान्ति है; वासनाओं से मुक्ति पाने में स्वतंत्रता है; ईमानदारी में सत्यपरायणता है; निष्काम होने में महत्ता है।

५. अपने हृदय से सकामता निकाल दो, ताकि तुम्हारे चरण मुक्त रहें और तुम्हारा शरीर विश्रामयुक्त। दमनकारी की प्रशंसा भले ही हो, वह अपने पर लज्जित होता है, दमित जन को भले ही भली-बुरी सुननी पड़े, वह संतुष्ट रहता है।

६ तुम्हारी मृत्यु समीप है और उस पर तुम्हारा वश नहीं; दिन और रात शीघ्रता से बीतते जा रहे हैं। एक क्षण भी ऐसा नहीं बीत रहा है जबकि समय भागता न जा रहा हो। अपनी मृत्यु का सम्मान करो और उसके लिए सदैव तैयार रहो। जब तुम्हारा शरीर भौतिक सुखों का अभ्यस्त हो जाता है उस समय अपनी मृत्यु का स्मरण करो, जब तुम अपने आनंदों में उल्लसित हो, तुम्हें सुखोत्तर आनेवाले दुखों के लिए खिन्न होना चाहिए।

७. न तो युवाकाल की कामनाओं से, न आत्मप्रशंसा से मुक्ति मिल सकी, न औषधि स्वास्थ्य प्रदान कर सकी। यदि तुम्हारे पास तीन वस्तुएं हैं तो तुम संसार में सफल होओगे : अपने परिश्रम की कमाई, अचल मित्रता, सत्यपरायणता तथा पवित्रता।

[३] फारसी

इस सुन्दर भाषा का प्राचीन इतिहास विशाल है। पहले यूनानियों ने इसका नाम 'पर्सीस' रक्खा, फिर अरबों ने 'फुर्स' और

बाद में यूरोपीय भाषाओं में इसे 'पर्शियन' नाम से अभिहित किया गया। इसका नाम 'फार्स' शब्द से उत्पन्न हुआ है। यह नाम शीराज के ३० मील उत्तर में स्थित मैदान का मूल नाम है, जिसे अब 'मर्व-दश्त' कहते हैं। तीसरी शताब्दी हिजरी में विध्वस्त किया गया ऐतिहासिक नगर 'इस्तख्र' इसी मैदान में स्थित था।

इस भाषा का मूल स्रोत प्राचीन है जो कि हिन्द-यूरोपीय भाषा वंश से निस्सृत है। भाषा का जन्म होते ही शीघ्र इससे गद्य और काव्य का एक सुन्दर साहित्य प्रकट होने लगा जिससे इसके निर्माताओं के काव्यप्रिय स्वभाव एवं कोमल रुचि का पता चलता है।

जैसा कि मैं कह चुका हूँ, मीडों की भाषा, या पश्चिमोत्तर ईरान के निवासियों की प्राचीन बोली और अवेस्ता की भाषा, अर्थात्, पूर्वोत्तर ईरान में प्रचलित बोली में केवल सुप्रसिद्ध महान् ग्रंथ अवेस्ता से कुछ अपूर्ण अंश प्राप्य है। परंतु फार्स लोगों की भाषा पहलवी, अर्थात् मूलतः दक्षिणी ईरान में बोली जाने वाली तथा कालान्तर में सारे देश में फैल जाने वाली भाषा की प्रचुर लिखित सामग्री विद्यमान है। उन प्रारंभिक दिनों में भी पहलवी ने पूर्णता की ऊँची श्रेणी प्राप्त कर ली थी, और एक सुविख्यात आधुनिक भाषाशास्त्री एवं प्राच्य विद्यावेत्ता, एच० डब्ल्यू० बेली के शब्दों में "सासानी युग का सातवीं सदी ई० में अंत होते होते

फारसी आधुनिक अफगानिस्तान की पश्तो की अपेक्षा कहीं अधिक विकसित हो गई थी।"[1]

ईरान की प्राचीन संस्कृति के पतन के ७ शताब्दी पश्चात् भी इस मधुर भाषा तथा इसके आकर्षक प्रार्थना-गीतों के विषय में ख्वाजा हाफिज शीराजी को अपने गीतों में प्रशंसा के ये उद्गार लिखने पड़े :

बुलबुल ब शाखे सर्व ब गुलबागे पहलवी ।
मी खान्द दोश दर्से मुकामाते मानवी ॥
मुर्गाने बाग काफिया सजानो बजलागू ।
ता ख्वाजा मै खुरद ब गजलहाय पहलवी ॥

दुर्भाग्यवश काल की विडंबना और भारी हलचलों ने प्रायः इस सुन्दर साहित्य का उच्छेद कर दिया है। यह ईरानी मस्तिष्क की पवित्रतम उपज थी। परन्तु राष्ट्र महती जीवनी शक्ति से सपन्न था, अत इस भाषा ने इन विपदाओं से सफलतापूर्वक लोहा लिया।

फारसी-साहित्य के विद्यार्थियों के लिए यह बहुत कठिन है कि वे कोई विशाल साहित्य (गद्य या पद्य) उन स्फुट अवशेषों से प्राप्त कर सकें जो इस्लामपूर्व दिनों से विद्यमान हैं। ये अवशेष प्राचीन भाषाओं से संबंधित गवेषणाओं में भाषा-विज्ञान के अध्येता की सहायता करने भर के लिए ही पर्याप्त हैं।

---

१ दि लिगेसी ऑफ पर्शिया—पृ० १६०

यह वांछनीय तथा आवश्यक है कि भाषाविज्ञान के वे भारतीय छात्र, जो आधुनिक भारतीय भाषाओं का अध्ययन करना चाहते हैं तथा उन पर ईरानी भाषाओं का प्रभाव जानना चाहते, हैं उन पहलवी पुस्तकों को पढ़ें, जो अधिकतर बंबई में प्राप्य हैं।

अपना यह व्याख्यान मैं यहीं समाप्त करना चाहता हूँ और इसकी त्रुटियों के लिए क्षमा-याचना करता हूँ, क्योंकि समय कम और विषय विशाल है।

चतुर्थ व्याख्यान

इस्लामोत्तर गद्य

रूपरेखा

[१] इस्लामोत्तर युग के प्रथम चरण में फारसी गद्य
मंगोल आक्रमण के पूर्व का गद्य, जन्म और प्रगति का युग

(क) गद्य का विकास।

(ख) अरबी-साहित्य में ईरानियों का योगदान।

(ग) फारसी गद्य का जन्म-स्थान।

(घ) मंगोलपूर्व युग के फारसी गद्य की प्रमुख विशेषताएँ।

(ङ) तत्कालीन गद्य की प्रगति और प्रपूर्णता।

(च) तत्कालीन युग के आदि और अंत के क्रमशः दो उदाहरण।

[२] इस्लामोत्तर युग के द्वितीय चरण में फारसी गद्य
मंगोल आक्रमणोत्तर गद्य, ह्रास और पतन का युग

(क) इस युग का क्षेत्र-विस्तार

(ख) राजनीतिक स्थिति और उसका तत्कालीन साहित्य पर प्रभाव।

(ग) गद्य में नवीन प्रगति।

(घ) तत्कालीन गद्य-साहित्य द्वारा प्रतिपादित विषय : १. इतिहास, २. धार्मिक पुस्तकें, ३. दर्शन, अध्यात्म तथा आचारशास्त्र की पुस्तकें, ४. विविध पुस्तकें।

(ङ) इस युग के गद्य ग्रंथों की एक विशिष्ट नामावली १. इतिहास, २. धार्मिक ग्रंथ, ३. आचार शास्त्र, निबंध आदि ४. भारतवर्ष में लिखित पुस्तकें।

[३] इस्लामोत्तर युग के तृतीय चरण मे फारसी गद्य आधुनिक गद्य

(क) इस युग का उदय

(ख) इसकी विशेषताएँ

(ग) पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव

(घ) आधुनिक गद्य की प्रमुख विशेषताएँ

[४] सारांश

[१] इस्लामोत्तर युग के प्रथम चरण मे फारसी गद्य; मगोल आक्रमण के पूर्व गद्य जन्म और प्रगति का युग

(क) गद्य का विकास

अरब आक्रमण के बाद तीन शताब्दियो (७वी, ८वीं तथा ९वीं ई०) तक का ईरान का इतिहास अंधकारावृत है। इस युग में, अरब, जो कि जाति की दृष्टि से सेमिटिक हैं, आर्य-ईरानियो के सम्पर्क में आए। इस सपर्क के फलस्वरूप एक नई जाति, एक नई भाषा और नए साहित्य का जन्म हुआ तथा ईरान के लबे इतिहास में एक नया अध्याय खुला।

जैसा कि मै पहले व्याख्यान में कह चुका हूँ, राजनीतिक तथा साहित्यिक दोनों दृष्टियो से यह युग दो भागो में बांटा जा सकता है

(१) ईरानी-अरबी संपर्क से सवधित।

(२) ईरान पर मगोल आक्रमण के प्रारभ से।

प्रथम भाग को इस्लामी सस्कृति के अभ्युदय, और द्वितीय भाग को पतन का युग कहा जा सकता है। प्रथम भाग में विकास, सुधार और प्रगति के चिह्न दिखाई पड़ते है और द्वितीय में गतिरोध और पतन के।

इतिहास के इस भाग मे ईरानी-अरबी जाति के उत्पन्न होने के साथ ही आधुनिक फारसी ने जन्म लिया। अरबी और पहलवी

भाषाओं के सम्मिश्रण का यह प्रतिफल था। १०वी शताब्दी ई० में इस सम्मिश्रण ने पूर्णता तथा सुव्यवस्था प्राप्त की। इसने एक अमर साहित्य प्रदान किया जिसका विश्व के साहित्यों में आदर-पूर्ण स्थान है। इसके गौरवग्रंथ अब भी मानव जाति की साहित्यिक रचनाओं के शृंगार माने जाते हैं।

यद्यपि इस युग में बग़दाद की खिलाफत अपनी केन्द्रीय स्थिति में सानंद बनी रही, विशेषकर राजनीति तथा अध्यात्म के मसलो में; तथापि एक के बाद दूसरे अनेक स्वतंत्र राज्य समस्त ईरान में स्थापित किए गए। इन राज्यो के अधिकांश शासक विद्या के आश्रयदाता थे और विशेषकर काव्य के तथा बाद में गद्य के भी उदय और उत्थान को प्रोत्साहन देते रहे।

(ख) अरबी साहित्य में ईरानियों का योगदान

धार्मिक शिक्षा और वैज्ञानिक, दार्शनिक एवं धार्मिक विचारो के प्रसार का माध्यम होने के कारण अरबी भाषा इस युग में अनेक ईरानी विद्वानों तथा लेखको की मूल्यवान् रचनाओ द्वारा समृद्ध होती रही। ईरान और सीरिया के सभ्य नगरो में बस जाने के बाद अरब खानाबदोशो ने सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नगरवासी ईरानियो की सहायता ली। अतएव चार सदियों तक (७वीं से १०वी सदी ई०) ईरानियो ने न केवल अरबी में असंख्य पुस्तकें लिखीं वरन् उन्होंने अरब राज्यो का

शासन भी चलाया। कोष-निर्माण, व्याकरण, पिंगल, अलंकारशास्त्र, निबंधरचना आदि से संबंधित अरबी भाषा के विविध विषयों पर भी ईरानियों का अधिकार था। इसी प्रकार इस्लामी अध्ययन के, प्राथमिक विषय जैसे तफसीर (धर्मनिरूक्त), हदीस (परंपरा धर्मशास्त्र, न्यायविधान आदि भी ईरानियों द्वारा रचित ग्रंथों की नींव पर आधृत किए गए। प्रस्तुत व्याख्यान में मेरे लिए यह दुष्कर होगा कि अरबी में लिखने वाले ईरानी विद्वानों की पूरी सूची दूँ।[1]

(ग) फारसी गद्य का जन्मस्थान

आधुनिक फारसी भाषा और साहित्य सर्वप्रथम ईरान के पूर्वी क्षेत्रों और मध्य एशिया में विकसित हुए। ज्यों-ज्यों हम पश्चिम की ओर, बगदाद के अधिकाधिक समीप बढ़ेंगे, त्यों-त्यों हमें अरबी का प्रभाव उत्तरोत्तर अधिक और स्पष्ट होता दिखाई पड़ेगा। इस प्रकार फारसी गद्य के उदय और निर्माण का प्रथम सोपान पहले ट्रांसोक्षियाना में, तदनंतर खोरासान और सगस्तान में परिलक्षित होता है। चौथी शताब्दी हिजरी—१०वीं शताब्दी ई० में इन क्षेत्र में फारसी की आश्चर्यजनक उन्नति हुई। आगामी तीन शताब्दियों

---

१. विशेष जानकारी के लिए देखो—दि लिगेसी ऑफ पर्शिया, पृ० २०४ तथा फारस का साहित्यिक इतिहास (ब्राउन कृत) प्रथम खण्ड, पृ० २६०—६० ।

भाषाओं के सम्मिश्रण का यह प्रतिफल था। १०वीं शताब्दी ई० में इस सम्मिश्रण ने पूर्णता तथा सुव्यवस्था प्राप्त की। इसने एक अमर साहित्य प्रदान किया जिसका विश्व के साहित्यों में आदरपूर्ण स्थान है। इसके गौरवग्रंथ अब भी मानव जाति की साहित्यिक रचनाओं के शृंगार माने जाते हैं।

यद्यपि इस युग में बग़दाद की ख़िलाफ़त अपनी केन्द्रीय स्थिति में सानंद बनी रही, विशेषकर राजनीति तथा अध्यात्म के मसलों में; तथापि एक के बाद दूसरे अनेक स्वतंत्र राज्य समस्त ईरान में स्थापित किए गए। इन राज्यों के अधिकांश शासक विद्या के आश्रयदाता थे और विशेषकर काव्य के तथा बाद में गद्य के भी उदय और उत्थान को प्रोत्साहन देते रहे।

(ख) अरबी साहित्य में ईरानियों का योगदान

धार्मिक शिक्षा और वैज्ञानिक, दार्शनिक एवं धार्मिक विचारों के प्रसार का माध्यम होने के कारण अरबी भाषा इस युग में अनेक ईरानी विद्वानों तथा लेखकों की मूल्यवान् रचनाओं द्वारा समृद्ध होती रही। ईरान और सीरिया के सभ्य नगरों में बस जाने के बाद अरब खानाबदोशों ने सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नगरवासी ईरानियों की सहायता ली। अतएव चार सदियों तक (७वीं से १०वीं सदी ई०) ईरानियों ने न केवल अरबी में असंख्य पुस्तकें लिखीं वरन् उन्होंने अरब राज्यों का

शासन भी चलाया। कोष-निर्माण, व्याकरण, पिंगल, अलंकारशास्त्र, निबंधरचना आदि से संबंधित अरबी भाषा के विविध विषयो पर भी ईरानियो का अधिकार था। इसी प्रकार इस्लामी अध्ययन के, प्राथमिक विषय जैसे तफसीर (धर्मनिरुक्त), हदीस (परंपरा धर्मशास्त्र, न्यायविधान आदि भी ईरानियो द्वारा रचित ग्रंथों की नींव पर आधृत किए गए। प्रस्तुत व्याख्यान में मेरे लिए यह दुष्कर होगा कि अरबी में लिखने वाले ईरानी विद्वानो की पूरी सूची दूँ।[1]

(ग) फारसी गद्य का जन्मस्थान

आधुनिक फारसी भाषा और साहित्य सर्वप्रथम ईरान के पूर्वी क्षेत्रों और मध्य एशिया में विकसित हुए। ज्यो-ज्यों हम पश्चिम की ओर, बग़दाद के अधिकाधिक समीप बढ़ेंगे, त्यों-त्यों हमें अरबी का प्रभाव उत्तरोत्तर अधिक और स्पष्ट होता दिखाई पड़ेगा। इस प्रकार फारसी गद्य के उदय और निर्माण का प्रथम सोपान पहले ट्रासोक्षयाना में, तदनन्तर सीस्ताँ और ख़ुरासान में परिलक्षित होता है। चौथी शताब्दी हिजरी–१०वीं शताब्दी ई० में इन क्षेत्र में फारसी की आश्चर्यजनक उन्नति हुई। आगामी तीन शताब्दियो

१. विशेष जानकारी के लिए देखो—दि लिगेसी ऑफ पर्शिया, पृ० २०४ तथा फारस का साहित्यिक इतिहास (ब्राउन कृत) प्रथम खण्ड, पृ० २६०–७०।

(५वीं, ६वीं, ७वीं हिजरी) में दक्षिणी और पश्चिमी ईरान, अर्थात् फारस और ईराक में यह भाषा और साहित्य और भी पल्लवित हुए।

तीसरी शती हिजरी में, ८७२ ई० में सीस्तान में, और तत्पश्चात् ९०३ ई० में बुखारा में दो स्वतंत्र राज्यों की स्थापना हुई। प्रथम, अर्थात् सीस्तान-राज्य की संस्थापना सीस्तान के सफारी वंश ने की और द्वितीय, अर्थात् बुखारा-राज्य की स्थापना ट्रांस-सोक्षयाना तथा खुरासान के सामानी-वंश ने।

ये दोनों जिले नवजात फ़ारसी गद्य और काव्य के क्रीडास्थल थे। इस युग के गद्य में अभी पहलवी शब्दों, प्रयोगो, शब्द-खंडो का प्राचुर्य था, यहाँ तक कि अरब-पूर्व वाक्य-रचना भी इसमें देखी जा सकती है। इस युग के कतिपय गद्य ग्रंथ सौभाग्य से बच गए हैं। इस युग की कुछ पाण्डुलिपियो ने भी काल को मात दी है और सम्प्रति ईरान, यूरोप और भारत के पुस्तकालयों में अत्यन्त मूल्यवान निधियों की तरह सुरक्षित रखी गई हैं।

(घ) मंगोल-पूर्व युग के फारसी गद्य की प्रमुख विशेषताएँ :

ज्यों-ज्यों ईरान राष्ट्र ५वीं और ६ठीं शताब्दियों (हिजरी) अर्थात् ११वीं और १२वीं सदी ई० में इस्लामी सभ्यता और अरबी संस्कृति से अधिकाधिक प्रभावित होता गया, त्यों-त्यों फारसी गद्य अरबी शब्दों, प्रयोगों एवं प्रतीको को अधिकाधिक संख्या में लेने

लगा। यहाँ तक कि फारसी की वाक्य-रचना भी अरबी व्याकरण, अलंकार और पिंगल से प्रभावित होने लगी। अरबी कहावतों, मुहावरों, गीतों तथा धार्मिक उद्धरणों को फारसी गद्य-पुस्तकों में रखा जाने लगा।

इस गद्य शैली के अनेक ग्रंथ बचे हैं। उनमें से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ इतिहास, धर्मनिरुक्त, धर्मशास्त्र, आचारशास्त्र, साहित्य और विज्ञान पर हैं।

इन शताब्दियों की गद्यशैलियों के प्रतिनिधि उदाहरण के रूप में उनमें से कुछ का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है:

१ इतिहास तथा धर्मनिरुक्त : अततबरी कृत (मृत्यु ३१० हि०। ९२३ ई०)

२. दानिशनामा-ए-अलाई : ऐविसेन्ना या बूअलीसीना कृत दर्शन ग्रंथ (मृत्यु ४२७ हि०। १०३७ ई०)

३. अत-तफहीम लि अवायल सनाअत-इत-तंजीम : अल-बेरूनी कृत ज्योतिष ग्रंथ (मृ० ४४० हि०। ९७३ ई०)

४. काबूसनामा : कैकाऊस बिन इस्कंदर कृत आचारशास्त्र, (४७५ हि०। १०८२ ई०)

५. यात्रा-विवरण तथा अन्य ग्रंथ : नासिर ख़ुसरो कृत (मृ० ४८१ हि०।१०८८ ई०)

६. चहार मकाला : निजामी अरूज़ी समरक़न्दी कृत, ५५२ हि०। ११५७ ई०)

७. जवामि-उल-हिकायात : औफी कृत, ६३० हि० । १२३२ ई०

८. धर्मनिरुक्त : ख्वाजा अब्दुल्ला असारी कृत, ५२० हि० । ११२६ ई०

९. कलीलाह्-व-दिमनाह् का अनुवाद : नसरुल्ला बिन अब्दुलहमीद कृत, ५३९ हि० । ११४४ ई०

१०. जख़ीरा-ए-ख्वारज्मशाही : चिकित्साशास्त्र, जमनुद्दीन अबू इब्राहीम इसमाइल बिन हसन गुरगानी ५३१ हि० । ११३६ ई०

अंततः आधुनिक फारसी गद्य का सर्वश्रेष्ठ गौरव ग्रय ७वीं शताब्दी हि० (१३वीं शती ई०) के मध्य में रचा गया। आचार-शास्त्र पर यह अमूल्य ग्रंथ सादी कृत 'गुलिस्ताँ' है (६५६ हि० / १२५८ ई०)।

इस युग में रचित महान् ग्रंथों में से कुछ का यह उल्लेख पहलवी भाषा के युग से आधुनिक फ़ारसी गद्य का क्रमिक उत्थान दिखाने के उद्देश्य से किया गया है।

(ङ) इस युग मे गद्य की प्रगति और प्रपूर्णता

यह स्मरणीय है कि फारसी सर्वांगपूर्ण भाषा के रूप में ४थी शताब्दी हिजरी । १०वीं शताब्दी ई० में विकसित हो चुकी थी। यह पूर्णता की उच्च स्थिति तक पहुँच गई थी और पश्चात्कालीन विकास के फलस्वरूप इसके वाह्यरूप में कुछ छोटे तथा नगण्य परिवर्तनों के सिवा कोई भारी हेर-फेर न हुआ और इस भाषा का मूल सार जैसा था वैसा ही रह गया।

चौथी शताब्दी हिजरी । १० वीं शताब्दी ई० की फारसी की तुलना १५वीं शताब्दी की अंग्रेजी से की जा सकती है। जिस प्रकार एलिजाबेथ-युग के बेकन, स्पेंसर, शेक्सपियर प्रभृति लेखकों ने अंग्रेजी को स्थायित्व तथा स्थिरता प्रदान की, उसी प्रकार चौथी शताब्दी हि० के लेखकों तथा सीस्तां के इतिहास के लेखक ऐसे बाद के इतिहासकारों ने, तबरी के ग्रंथों के अनुवादकों, तथा रोदकी और फिरदौसी जैसे कवियों ने फारसी का मान स्थिर करने में बहुत योग दिया। उन लोगों द्वारा डाली गई नींव इतनी सुदृढ़ और ठोस प्रमाणित हुई है कि हजार वर्ष के बीतने पर भी वह अचल है।

इस युग की अत्यधिक प्राचीन पुस्तकों में से कुछ तो अरबी से फारसी में अनुवाद हैं जिनकी पाण्डुलिपियाँ इस समय विद्यमान हैं। उन्हीं में से एक है 'तारीखे-तबरी' जिसका उल्लेख ऊपर हो चुका है। दूसरी है तफ़्सीरे-तबरी। ये दोनों ग्रंथ मूलतः अरबी में तबरिस्तान, माजंदरान के मुहम्मद बिन जरीर द्वारा लिखे गए थे (मृत्यु ३१० हिजरी। ९२३ ई०)। इन दोनों मूल्यवान् कृतियों के अनुवादों की पाण्डुलिपियाँ अल्पाधिक ईरान, भारत तथा यूरोप के पुस्तकालयों में सुलभ हैं। इनके कुछ अंश छपे भी हैं।[1] मूल ग्रंथ बगदाद में लिखे गए थे और ४० वर्ष बाद बुखारा दरबार के

---

१ देखिए—र्‍यू कृत फारसी पाण्डुलिपियों की सूची (बृटिश म्यूज़ियम पुस्तकालय में) तथा सी० ए० स्टोरी कृत फारसी साहित्य।

एक विद्वान् मंत्री अल-बलअमी ने फारसी में इनके अनुवाद की आज्ञा दी।

एक दूसरा ग्रंथ, "कितावुल-अब्नियया अन हकायक-इल-अद्विया" १० वीं या ११ वीं सदी ई० में लिखित प्रतीत होता है। इस समय विद्यमान इसकी अनुपम पाण्डुलिपि की प्रति ४४७ ह०। १०५६ई० में प्रख्यात कवि 'असदी तूसी' द्वारा लिखी गई थी।

भूगोल पर 'हुदूदुल-आलम' नामक (३७२ हि०) एक चौथी पुस्तक का भी उल्लेख यहाँ कर देना समीचीन होगा। इस युग के एक बड़े विद्वान् तथा प्राच्य विद्याशास्त्री व्लैदिमिर मिनार्स्की ने अभी हाल में ही इसका अनुवाद अंग्रेजी में किया है।

(च) इस युग के आदि और अंत के क्रमश दो उदाहरण

इस युग के गद्य के उदाहरणस्वरूप यहाँ शाहनामा अबू-मसूर के प्राक्कथन से एक अंश उद्धृत कर देना पर्याप्त होगा जो कि ३४६ हि० में लिखा गया था। ऐसा भासित होता है कि यह अपूर्ण अंश मूलतः प्राचीन पुस्तक खुदाईनामा में था। हम पहले ही बता चुके हैं कि यह पुस्तक अब अप्राप्य है और फिरदौसी के शाहनामा का प्रमुख आधार थी। यह दृष्टव्य है कि इसमें विशुद्ध फ़ारसी है और १ प्रतिशत से अधिक अरबी शब्द नहीं हैं। यह प्राक्कथन आधुनिक फारसी गद्य का प्राचीनतम लिखित उदाहरण

है और ४थी शताब्दी हिजरी। १० वीं शती ई० की गद्य-शैली की सरलता तथा स्वच्छता का प्रतिनिधि है।

जो खण्ड मैंने चुना है उसमें यह वर्णित है कि कलीलेह्-व-दिमनाह (मूलतः पचतंत्र) कैसे भारत से ईरान ले जाया गया। अपने पहले के एक व्याख्यान में मैंने उसी विषय पर शाहनामा (४थी शती हि०) और कलीलेह्-व-दिमनेह् वहरामशाही, ११४४ ई० से दो अवतरण उद्धृत किए थे। आप उनकी परस्पर तुलना करके शैली का मत भेद देख सकते है तथा यह जान सकते है कि दो विभिन्न युगो में (मूल फ़ारसी में) कितनी प्रगति हुई।

"व मामून पिसरे हारूनुरशीद मनशे पादशाहान व हिम्मते मेहतरा दाश्त। यक रोज वा फर्जानगा निशस्ता वूद गुफ्त मरदुमवायद कि ता अंद्री जहा वाशद व तवानाई दारद बिकोशन्द ता अजू यादगारे वुवद ता पस अज मर्गे ऊ नामश जिन्दा वुवद। अवदुल्ला पिसरे मुकफ्फा कि दवीरे ऊ वूद गुफतश कि अज़ किसरा अनुशर्वा चीज़े मादा अस्त कि अज़ हीच पादशाह नमादा अस्त। मामू गुफ्त चि मादा। गुफ्त नामाए अज़ हिन्दुस्ता व्यावुर्द आकि वरज़ूया तवीव अज़ हिन्दवी वपहलवी गरदानीदा वूद ता नामे ऊ जिन्दा गुद मियाने जहानिया व पानसद खरवार दिरम हजीना कर्द। मामू आ नामा विख्वास्त व आ नामा वदीद। फरमूद दवीरे ख्वेश रा ता अज़ ज़ुवाने पहलवी व जुवाने ताज़ी गरदानीद, पस अमीर

सईद नस्र बिन अहमद ईं सुखन बिशुनीद खुश आमदश, दस्तूरे स्वेश रा खाजा बलअमी बरा दाश्त ता अज़ जुबाने ताज़ी बजुबाने पार्मी गरदानीद ता ई नामा बदस्ते मर्दुमा उफ्ताद व हर कसे दस्त बदो अन्दर जदद व रोदकी रा फरमूद ता व नज्म आवरद व कलेलाह व दिमनाह अन्दर जुबाने खिरद व बजुर्ग उफ्ताद व नामे ऊ बदी ज़िन्दा गश्त व ईं नामा अजू यादगारे बिमानद पस बनयाने तसावीर अन्दर अफजूदद ता हर कसे रा खुश आयद दीदन व खादने आ।"[1]

सातवीं शती हिजरी (१३वीं शती ई०) अर्थात् ऊपर के उद्धरण के प्रायः तीन शताब्दियो के बाद के फारसी गद्य के उदाहरणस्वरूप सादी कृत गुलिस्ताँ से एक कहानी नीचे दी जाती है। भाषा के अंतर सुगमतापूर्वक दृष्टव्य है।

"दो अमीर ज़ादा दर मिस्र बूदद यके इल्म आमूख्त व आ दिगर माल अदोख्त, आकबतुल अम्र आ यके अल्लामा ए अस्र शुद व ईं दिगर अजीजे मिस्र गश्त पस ईं त्वागर व चश्मे हिकारत दर फकीह नजर कर्दे व गुफ्ते मन व सल्तनत बि रसीदम व ऊ हमचुना दर मसकनत मादा। गुफ्त ए ब्रादर शुक्रे नेमते बारी अज्ज़ इस्मह् हम चुना बर मन अफजूतरस्त कि मीरासे पैगम्बरा याफतम यानी इल्म व तुरा मीरासे फिरऔन व हामा रसीद यानी मुल्के मिस्र।"[2]

---

१. हजारे फिर्दौसी तहरान १३३२ पृ० १३५-६

२. किताबे गुलिस्ता-मिर्जा अब्दुल अजीम गुर्गानी, तहरान—१३१० पृ० ६६।

[२] इस्लामोत्तर युग के द्वितीय चरण मे फारसी गद्य मगोल आक्रमणोत्तर गद्य ह्रास और पतन का युग

(क) इस युग का क्षेत्र-विस्तार

जैसा कि मै पहले कह चुका हूँ, ईरान पर मंगोल-आक्रमण (१२२० ई०) के साथ यह युग प्रारंभ हुआ और आधुनिक युग का उदय होते ही अर्थात्, ईरान-रूसी युद्ध (१८२८ ई०) की समाप्ति के साथ, समाप्त हुआ।

(ख) राजनीतक स्थिति और उसका तत्कालीन साहित्य पर प्रभाव

इस युग में सर्वत्र इस्लामी सस्कृति का पतन होने लगा। मच पर मंगोल, तातार तथा तुर्की जातियो का एक नया तत्व प्रकट हुआ और मध्य तथा पश्चिमी एशिया में स्थित देशो में प्रविष्ट हुआ। उनका आधिपत्य पूर्वी भारतवर्ष तक था। इन क्षेत्रो में शासन करनेवाले अधिकाश राजवंश मूलतः तुर्की या मंगोल रक्त के थे, जैसे एशिया-माइनर में ओटोमान तुर्क, ईरान में तैमूरवंशी चगताई तथा भारत में वावर वंश।

मगोल तथा तातार शासक इसके वहुत इच्छुक थे कि उनके नाम इतिहास में सुरक्षित रहें। वे सचेष्ट थे कि अपने बाद वे अपनी जीतों तथा सैन्य पराक्रमो के गौरवपूर्ण विवरण छोड़ जायँ। अत. इस दिशा में अपने प्रतिद्वन्द्वियो को मात देने के अभिप्राय से

प्रत्येक मंगोल शासक न अपने राजवंश का इतिहास दत्तचित्त होकर सकलित किया और इस हेतु इतिहासकारो को भी प्रोत्साहित किया। ईरान के प्राचीन राजाओ की तरह वे भी स्तुतियो तथा विरुदावलियो के शौक़ीन थे। और फिर, ज्योतिष और चिकित्सा जैसे रहस्यपूर्ण विज्ञानो में उन्हें बडा विश्वास था। अतएव उन्होंने अपने दरबारों में इतिहासकारो, कवियो, वैद्यो, ज्योतिषियो को बहुत बड़ी संख्या में रक्खा। अत. इस युग में गद्य और पद्य में उपर्युक्त विषयो पर अनेक ग्रंथ लिखे गए। इन ग्रंथो की शैली में अलंकाराधिक्य और तुकांत, अतिरंजना और शब्दो का घटाटोप विशेष है।

(ग) गद्य में नवीन प्रगति

फ़ारसी गद्य का अब ह्रास होने लगा। प्रथम चरण (१०वीं से १३वीं शताब्दी ई०) के शानदार आधारगत कार्य अभी विलुप्त नही हुए थे। फिर भी, इन शताब्दियो में गद्य-शैलियों में उल्लेख परिवर्तन हुए।

हमारे साहित्य के इतिहास में, विशेष कर गद्य में, यह यु सामान्यतः गतिरोध और ह्रास का युग था। इसमें फारसी ग अपनी शक्ति, ताजगी तथा जीवंत मुद्रा खो बैठा। पहले के दिन में प्रचलित शैलियों के सौंदर्य और आकर्षक लक्षण अब न रहे

यद्यपि संख्या में रचनाएँ अधिक होने लगी, तथापि संस्मरणीय कहलाने योग्य इस युग का एक भी बड़ा ग्रंथ नही है।

यद्यपि इस युग में काव्य का अधिक पतन नही हुआ, तथापि गद्य लेखकों ने अपनी वृत्तियो में अर्थ से अधिक आकार पर ध्यान दिया। उनमें से अधिकांश शैलीगत वैचित्र्य तथा पाण्डित्य-प्रदर्शन में ही लगे रहे। उपयोगी तथा गंभीर विषयो पर लिखते समय भी उन्होने शब्दाडंबर से अपनी गति रुद्ध कर दी। फल यह हुआ कि पहले की रचनाओ में प्राप्य लाघव, सरलता, स्पष्टता का स्थान एक तमिस्र और मिथ्याडंवर से पूर्ण शैली ने ले लिया। इस युग की पुस्तकों में फ़ारसी मूल के शब्दो का प्रतिशत अपेक्षाकृत कम है। दूसरी ओर, इस युग की सभी रचनाओ के मुख्य तत्व है अरबी शब्द, विशेषकर तुकान्त गद्य और अलंकार।

इस युग की एक विशेषता, जो हमारे लिये विशेष रोचक है, वह है, भारत में गद्य और काव्य में बहुत संख्यक फ़ारसी पुस्तकों की सृष्टि। इनमें से कुछ के लेखक ईरान से आये हुए ईरानी थे जो भारत में बस गए थे। कुछ अन्य पुस्तकों के लेखक भारतीय ही थे जो फारसी में लिखा करते थे, क्योंकि दोनों देशो में शासन की राजनीतिक तथा धार्मिक प्रणालियाँ, (६ वी से १२ वीं शताब्दी हिजरी में) कुछ हद तक समान थीं, अतएव इस युग में दोनों देशों के साहित्यिक ग्रंथों में बड़ा भारी साम्य है, अर्थात् ईरान में तैमूरियों तथा सफवियों द्वारा अपने दरबारों में साहित्य-स्थापना के प्रकार

उत्तरी भारत के मुगल शासकों तथा दक्षिण के कुछ राजवंशों द्वार भी अपनाए गए। फलस्वरूप, इस्फ़हान तथा हिरात में प्रयुक्त विषय तथा वस्तुतत्व दिल्ली और गोलकुण्डा में भी पूर्णतया प्रयुक्त होने लगे। इस प्रकार, इस युग में ईरान तथा भारत के गद्य के सामान्य तत्व एक-से हैं। जिन लेखकों ने ६ शताब्दियों (८ वीं से १३ वीं सदी हिजरी) तक गद्य-साहित्य में योग दिया उनकी दो कक्षायें हैं। प्रथम वे जिन्होंने सुल्तानों, सामंतों, मन्त्रियों की प्रशसा गाई, जिनमें से अधिकांश तूरानी थे। इस कार्य में स्पर्धापूर्वक ये लेखक अलंकृत रचना तथा अनुप्रास में एक-दूसरे से आगे रहने का यत्न करते थे।

दूसरी कक्षा उन लेखको की थी जो धार्मिक, साम्प्रदायिक तथा रहस्यपूर्ण (आध्यात्मिक) विषयों पर लिखते थे।

यद्यपि बग़दाद की खिलाफत के पतन के कारण अरबी भाषा ईरान पर अपना आधिपत्य खो चुकी थी और सामान्यतया पतनोन्मुख थी, तथापि पूर्ववत्, यह ज्ञान विज्ञान की शिक्षा का माध्यम बनी रही। अरबी में विशेषकर धार्मिक तथा दार्शनिक विषयो का विवेचन होता था।

(घ) तत्कालीन गद्य-साहित्य के विषय

इस युग में अध्ययन के विषय प्रमुखतः ये हैं :

१. इतिहास—मंगोल और तातार युग में गद्य लेखन की इस शाखा ने विशेष प्रमुखता प्राप्त की। विश्व के अथवा किसी राजवंश

के इतिहास पर अनेक विशाल ग्रंथ हैं। यह स्वीकार कर लेना चाहिये कि ज्ञान की इस विशेष शाखा में यह युग पूर्ण युगो से वहुत वढ़कर है, यद्यपि यह वड़प्पन संख्या तथा क्षेत्र विस्तार की ही दृष्टि से है, न कि (ग्रंथो के) गुण और महत्व की दृष्टि से।

२. धार्मिक ग्रन्थ—इनमें धर्म, निरुक्त, अध्यात्म, न्यायविधान तथा इस्लाम के पैगम्वरों और प्रमुख धार्मिक व्यक्तियो की जीवनियां सम्मिलित हैं। यह ध्यान देने योग्य बात है कि इस युग में ९वीं शताब्दियो के संघर्ष के बाद सुन्नी संप्रदाय को पराजित कर शिया-मत ने ईरान में एक राज्य की स्थापना की। इस तरह शिया-मत देश का राजधर्म हो गया। सफवी सरकार ईरान की प्रथम शिया सरकार थी। तव से हमेशा उस देश के लोगों ने 'बारह इमामो' का सिद्धान्त विशेष रूप से माना है। इस धार्मिक हेर-फेर का प्रभाव तत्कालीन साहित्य पर प्रत्यक्ष ही स्पष्ट है। शिया संप्रदाय तथा न्याय-विधान पर अनेक ग्रंथो तथा इमामो की स्तुतियाँ और प्रशंसाओ की रचना हुई। इतिहासकारों ने उनके गुणों की प्रशंसा में बहुत कुछ लिखा है और अपनी कृतियो में पैगम्वर के वंश की शहादत पर शोक प्रकट किया है।

३. दर्शन, अध्यात्म तथा आचारशास्त्र—विशेषकर सूफी-मत पर लिखी गई लोकप्रिय पुस्तकें मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं। मगोल-पूर्व युग में दर्शन तथा अध्यात्म सवधी ग्रथ अधिकतर अरवी में लिखे

जाते थे। यद्यपि इस युग में भी इन विषयो पर ईरानी तया अन्य लेखको द्वारा महत्व के ग्रंथ उसी भाषा में लिखे जाते रहे तथापि हम देखते हैं कि अरवी से अनभिज्ञ शासकों, सामंतो, तया मन्त्रियों के लाभार्थ इस विषय पर वड़े-वडे संतो ने वहुत वड़े परिमाण में, ारसी में पुस्तकें लिखी। जामी के नफ़हातुल-उंस अथवा अशअतुल-लमआत' इसके वहुत अच्छे उदाहरण हैं। ये पुस्तकें न केवल अपनी सरलता तथा सुगम शैली के लिये ही उल्लेख्य हैं, वरन् भावप्रवणता के लिए भी।

४. विविध पुस्तकेः——चिकित्सा, खगोल, औषध-निर्माण, रसायन, आदि विभिन्न विज्ञानो तथा ज्योतिष, जादू, धातु-विपर्यय, आदि रहस्य विज्ञानों पर लिखी गई। इस युग की एक और विशेषता है— विश्वकोष ग्रंथ।

(ङ) इस युग के गद्यग्रंथों की एक विशिष्ट सूची

उपर्युक्त विषयों पर इस युग की विशिष्ट गद्य-शैली के प्रतिनिधि उदाहरणों के रूप में मैं कुछ महत्वपूर्ण ग्रंथो का उल्लेख करूँगा।

१. इतिहासः—

१. जामिउत्-तवारीखः रशीदुद्दीन फज्लुल्ला हमदानी (रचना-काल ७१८ हि० । १३१८ ई०)

२. तारीखे-वस्साफ : अब्दुल्ला शीराजी (रचना-काल ७१२ हि०। १३१२ ई०)

३. तारीखे-जहांगुशाय अतामलिक जुवैनी (पूर्ण हुई ६५८ हि०। १२६० ई०)
४ जफर नामाय तैमूरी : शर्फुद्दीन यज्दी (रचना-काल ४१६ हि०। १०२५ ई०)
५. रौजतुस सफा : मीर ख्वाद (मृ० ६०३ हि०। १४६७-६८ ई०)
६. हबीबुस्-सियर : ख्वान्दमीर (मृ० ६४१ हि०/१५३५ ई०)
७. तारीखे आलम-आराए-अब्बासी : इस्कन्दरबेग मुर्शा (रचना-काल १०३८ हि०/१६२८-२६ ई०)

२. धार्मिक पुस्तकें:—

१. शवाहिदुन-नुबुव्वा : जामी रचना-काल ८८५ हि०/१४८० ई०
२. गौहरे मुराद : अब्दुर्रज्जाक लाहिजी (मृ० १०५१ हि०/१६४१ ई०)
३. जामि-अब्बासी (न्याय-विधान) : शेख बहाई (मृ० १०३१ हि०/१६२२ ई०)
४. हक्कुल-यकीन और हयातुल्-कुलुब (धार्मिक)। मौलाना मजलिसी (मृ० ११११ हि०/१६६६-१७०० ई०)

३. आचार-शास्त्र और निबंध, आदि—

१. अख़्लाके-नासिरी : ख्वाजा नासिरुद्दीन तूसी (मृ० ६७३ हि०/१२७४ ई०)। वास्तव में, जहाँ तक इस पुस्तक की शैली का संबंध है, इसे पूर्व युगीन रचनाओं के साथ वर्गीकृत करना चाहिए, परन्तु इसका लेखक मुगोल शासकों का समसामयिक था, अतः इसका उल्लेख यहाँ किया जा रहा है।

२. अख़्लाके-जलाली : जलालुद्दीन दवानी (मृ० ६०८ हि०/१५०२–३ई०)

३. अनवारे सुहैली : मुल्ला हुसैन काशिफी (मृ० ६१० हि०/१५०४–५ ई०)

इस युग की गद्यशैली के उदाहरणस्वरूप मैं अनवारे सुहैली से उद्धरण दूँगा। यह पुस्तक कालीलाह्-व-दिमनाह् का अरबी से फारसी में एक दूसरा अनुवाद है। यह ६वीं शताब्दी हि० / १५ वीं शताब्दी ई० में लिखी गई थी। इसके एक अनुच्छेद का विषय, अर्थात् फारसी से संस्कृत में उक्त पुस्तक के अनुवाद की कहानी मैं कई बार दुहरा चुका हूँ। पृष्ठ ६७–६८ पर दिये गए उद्धरण से तथा अपने पिछले व्याख्यान में उद्धृत अवतरण से तुलना के लिए यहाँ मैं अनवारे सुहैली से उद्धरण दे रहा हूँ। तत्कालीन गद्य-शैली के प्रमुख तत्वों का परिज्ञान कराने के साथ ही यह उद्धरण पूर्व युगों की शैलियों से इसके विभेद को भी प्रदर्शित करेगा। जहाँ तक भारतीय छात्रों का सम्बन्ध है

इस पुस्तक की विशेषता यह है कि पिछली प्रायः दो शताब्दियों से इस देश में फारसी के अध्ययनार्थ एक सर्वश्रेष्ठ पाठ्यपुस्तक के रूप में इसका प्रयोग होता आ रहा है।

"व अज़ जुमला रसायल कि मवानी तसनीफश मुश्तमिल वूद वर म्यामने नसीहत व ऊ मजमूए कुतव कि क्वायदे तालीफश मवनी वाशद वर मसायले हिकमते किताबे कलीलाह व दिमना अस्त कि हुकमाय हिन्द आरा वर तर्जे खास साख्ता अद व ब्राह्माए हिकमत-शिग्रार औजाए जामइय्यते आरा बर नमते मखसूस परदाख्ता, पन्दो हिकमतो लहवो हजल वहम इम्तिज़ाज दादा अद व सूरते सुख़न रा जिहते मैले अक्सर तवा वदा विना वर अफसाना निहादा अज जुबाने वहूशो वहायमो तुयूर असनाफे हिकायातो रवायात तकरीर करदा व दर ज़िम्ने आ अनवा फ़्वायदे हिकमत व म्यामने मौअजत इन्दराज नमूदा ता दाना वराय इस्तिफादा मुतालया नुमायद व नादान वराय तनज्जा व अफसाना विखानद व दर्से आ बर मुतअल्लम आसान वाशद व फी नफ़्सुल अम्र आ किताबे हिकमत-इन्तिसाव हदीकाएस्त।

हर नुक्ता अज़ू शिगुफ़्ता वागे।
अफरोखता तर ज़ि शव चरागे॥
लफज़श चो तरावते जवानी।
मानीश चो आवे ज़िन्दगानी॥

व अफाज़ते आ मवा ए हकायको मआनी वमर्तवाएस्त कि अज मवदाय ज़हूर ता ईं ज़मा व हर ज़ुवान मस्तफीदाने मजलिसे

इरादत व मुस्तवग्रदाने महफिले सग्रादत रा फायदा रमानींदा व किसवते ईं ग्रवयात रा जायक वर वालाय वालाय ईं किनाव खिलग्रतेस्त जेविन्दा व लायक "

४. भारतवर्ष मे लिखी गई पुस्तकें:—

१. मुंतखब-उत-तवारीख : बदायूनी (ग्रकबर के समकालीन मृ० १००४–६ हि०/१५९६–९८ई०)

२. तारीखे-ग्रल्फी : मुल्ला ग्रहमद ततवी तथा ग्रासफ खां (ग्रकबर के समकालीन ९९६ हि०/१५८८ ई०)

३. ग्रकबर नामा ग्रौर महाभारत,

४. ग्राईने ग्रकबरी : ग्रबुल फज्ल (९५८–१०११ हि०/१५५१–१६०२ ई०)

५. मग्रासरे रहीमी : ग्रब्दुल बकी निहावंदी

६. सेह नस्रे जहूरी : मुहम्मद नूरुद्दीन तुरशीजी (मृ० १०२७हि०/१६१८ ई०)

७. जवाहरुल-उलूम (विश्वकोष) ·मौलाना मुहम्मद फज्ल (मृ० ९४६ हि०/२५३९–४० ई०)

८ गुलशने इब्राहीमी ग्रथवा तारीखे फिरिश्ता : मुहम्मद कासिम हिन्दूशाह ग्रस्त्राबादी।

भारत मे प्रचलित सुगम फारसी गद्य का उद्धरण निम्नलिखित है। यह ग्रबुल-फज्ल की पुस्तक 'एय्यार दानिश' मे उस भाग से लिया गया है जहाँ पर किताब कलीलाह व दिमनाह का वृत्तान्त

है, और जिस किताब की रचना अकबर महान् की आज्ञानुसार १६ वी शताब्दी ई० के अन्त मे की गई थी और जिसकी सरलता उल्लेखनीय है :

" बर दानिशपजीराने नुक्तारस व रौशन-जमीराने सुबह नफस पोशीदा न मानद कि दर जमाने पेशी हकीम वेदपाय ब्राह्मण व फरमूदाय राय दाबशलीमे हिन्दी कि फरमारवाई-ए-बाजे अज विलायते हिन्दुस्तान दाश्त किताब कलेलाह्-व-दिमनाह् कि ब जुबाने हिन्दी करतक-व-दिमनक गोयन्द तसनीफ करदा बूद। व चू नज़रे दूरबीने राय दाबशलीम दरयाफ़्ता बूद कि दिलहा रा हमा वक्त बशुनीदने सुखनाने हिकमत मैल नमेबाशद व तबीयतहा ब अफसाना शुनीदन तवज्जह तमाम दारद अज़ दानाय मज़कूर ख़ास्ता बूद कि पर्दे दानायाने पेशी कि ब तराजूये दानिश सजीदा बाशद, लिबासे अफसाना पोशानीदा अज जुबाने बे जुबाना अदा नुमायद ता अज़ गरज़ पाक शुदा दर हमा औकात चि दर जमाने खुशहाली व चि दर हगामे सर्द दिली अज़ ख़ान्दने ई किताब सेरी बहम न रसद व मलाले न शवद व हिकायत मी कुनन्द कि यके अज़ ब्राहमनाने हिन्दुस्तान रा पुरसीदद कि दर यूनान ज़मीन मशहूरस्त कि ब जानिबे हिन्दोस्ता कोह हा बाशद कि दर आजा दारूहा रोयद कि मुर्दा बदा जिन्दा शवद ई सुखन रास्तस्त ? व रूश बदस्त आवुरदन चूनस्त ? ब्राह्मन गुफ़्त, ई सुखन रास्त अस्त लेकिन रम्ज़े दानायाने पेशीने मास्त चि अज़ कोहहा दानाया

ख़ास्ता अंद। व अज सुख़नाने हिकमत व अज़ मुर्दा नादाना कि व वसीलाय दानिशहा व जिन्दगानीये जावीद मी रसन्द, व ई सुख़नान रा दानायाने हिन्द फराहम आवुर्दा व किताबे साख़्ता अद कि नामे ऊ कलेलाह व दिमनाह अस्त। व दर ख़ज़ायने पादशाहा मी बाशद अज आजा बदस्त तवा आवुर्द अम्मा व सइये बिसयार, ता आकि नौशीरवा रा शौके तमाम व दीदने आ किताबे शरीफ पदीद आमद बरजोई तबीब रा कि व दानिशो तदबीर यगानाय रोजगार बूद ब हिन्दुस्तान फरिस्ताद व हकीमे मज़कूर व हिन्द आमद व मुद्दते मदीद दर बहम रसानीदने ई किताब अनवाय हीलाहा व वसीलाहा बर अगेख़्ता ई किताब रा अज़ जुबाने हिन्दी व पहलवी दर आवुर्दा तोहफाय मजलिसे आली-ए-नौशीरवा साख़्त व बवसीलाय ई खिदमत शरफे तहसीन-व-एहसान याफ़्ता कामयाब शुद। व नौशीरवा अज मुतालआ आ ख़ुशदिल व शिगुफ़्ता-ख़ातर शुदा मदारे मुहिम्माते मुलकी व माली रा बर ज़ाबितहाय ई किताब निहाद।[१]

भारत में लिखे गये फ़ारसी कोष

फारसी गद्य साहित्य के विकास का एक मुख्य तत्त्व है इस देश में कोष-निर्माण-कार्य का उद्भव और विकास। उत्तरी भारत पर

---

१. अबुल-फजल, एय्यार दानिश, (कानपुर १८६४), पृ० २-३।

मुगल-शासन के समय, और दक्षिण के शासकों के तत्त्वावधान में भारतीय विद्वान् फारसी कोशो के संग्रह-कार्य में तल्लीन रहे। अल्प काल में ही भारतवर्ष में निर्मित कोशो की संख्या ईरान के उन कोशों की संख्या से कही अधिक हो गई जो वहाँ पहले वन चके थे। ये इतने श्रेष्ठ हैं कि अपनी दिक्कतों के हल के लिए अब भी विद्वान् और विद्यार्थिगण इसका सहारा लेते हैं।

भारतवर्ष में लिखे गए वीसो शब्दकोशों में से कुछ अत्यधिक प्रसिद्ध कोशो की सूची मैं नीचे दे रहा हूँ :—

१. फरहंगे-जहाँगीरी : जमालुद्दीन हसैन शीराज़ी (जहाँगीर के समकालीन), मृ० १०३० हि०/ १६२१ ई०
२. फरहगे-रशीदी। अब्दुल-रशीद अलहुसैनी (शाहजहाँ के समयकालीन) रचना-काल १०६४ हि०/ १६५४ ई०
३. वुरहाने-काते : मुहम्मद हुसैन तब्रीज़ी (दक्षिण की कुतुवशाही के समकालीन) रचनाकाल १०६२ हि०/१६५२ ई०
४. वहारे-अजम : राय टेकचन्द वहार, दिल्ली का खत्री (रचना-काल ११५२ हि०)
५. फ़रहंगें-आनंदराज : मुहम्मद वादशाह, मन्त्री विज्या नगरम् के महाराजा आनन्दराज।

६. फरहंगे-निजाम : सैयद मुहम्मद अली दाइउल-इस्लाम (हम लोगों के समकालीन)

[१] इस्लामोत्तर युग के तृतीय चरण में फ़ारसी गद्य

(क) आधुनिक गद्य

इस युग का उदय—इस युग का गद्य-साहित्य १३वीं सदी हि० / १९ वीं सदी ई० से प्रारंभ हुआ और आधुनिक युग के विशाल राजनीतिक आंदोलनों का प्राकृतिक प्रतिफल है।

(ख) इसकी विशेषताएँ

इस स्थल पर एक बार फिर फारसी गद्य कृत्रिम और अस्पष्ट शैली, शब्दाडंबर और तुकान्त रचना से मुक्त हुआ। युगीन आवश्यकताओं के कारण यह गद्य बहुत लोकप्रिय भी हुआ। इस युग में ईरान में मुद्रण-कला का प्रवेश हुआ। प्राचीन महान् लेखकों के विचारो का प्रकाशन हुआ। पत्रकारिता प्रचलित हुई और युगीन गद्य-शैली को प्रभावित करने लगी। सैकड़ो दैनिक, साप्ताहिक, मासिक पत्रों का प्रकाशन तेहरान तथा ईरान के अन्य नगरों में प्रारम्भ हो गया। सभी पूर्वी देशो में, ईरान में भी, स्कूलो, कालेजो, विश्वविद्यालयो की स्थापना हुई। फलतः विद्याध्ययन के कपाट सर्वसाधारण के लिए मुक्त हो गए और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा लागू हो गई।

इस युग में ईरान में बड़े जबर्दस्त सामाजिक तथा राजनीतिक हेर-फेर हुए। प्राचीन मध्ययुगीन संस्थाएँ नष्ट हो गईं और उनके

स्थान में एक नई व्यवस्था समासीन हुई। एक जनतांत्रिक राष्ट्रीय सरकार के सामने मध्ययुग की निरकुश शासन-प्रणाली को घुटने टेकने पड़े।

(ग) पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव

यूरोपीय विद्वानो, वैज्ञानिको, एवं दार्शनिको, विशेषकर फ्रासीसी लेखको के अनेक महत्वपूर्ण ग्रथो का अनुवाद किया गया है। इस युग में फारसी साहित्य पर यूरोपीय साहित्य और सभ्यता का गहरा प्रभाव पड़ा।

अंततः, इसी युग में आलोचना की कला और विधिवत् अनुसंधान पर फारसी लखको ने पुस्तकें लिखीं। आधुनिक पद्धति से कला, विज्ञान तथा साहित्य का अध्ययन करने में विद्वान् संलग्न हुए। विद्वतापूर्ण आधुनिक गवेषणा में फारसी विद्वानों की नई पीढ़ी का पथप्रदर्शन करनेवाले दो विद्वानो का नामोल्लेख किया जा सकता है। उनमें से एक ईरानी आचार्य थे, जिनका नाम है स्वर्गीय मिर्जा मुहम्मद काज्वीनी (मृ० १६४६ ई०) और दूसरे थे कैम्ब्रिज के स्वर्गीय प्रोफेसर ई० जी० ब्राउन (मृ० १६२६ ई०)।

(घ) आधुनिक गद्य प्रमुख विशेषतएँ

संप्रति ईरान में प्रचलित शैली की सरलता तथा प्रवाह दिखाने के निमित्त इस युग के गद्य का एक उदाहरण पर्याप्त होगा। यह हमारे पुराने विषय का, अर्थात् कलीलाह-व-दिमनाह के संस्कृत से

फारसी में अनुवाद का, शिल्पगत पर्यवेक्षण है। यह उद्धरण तेहरान विश्वविद्यालय के एक प्रोफसर और आधुनिक विद्वान् मिर्जा अब्दुल-अज़ीम क़रीब द्वारा आधुनिक पद्धति से संपादित कलीलाह्-व-दिमनाह की भूमिका से लिया गया है।

अस्ले कलीलाह व दिमनाह व जुबाने हिन्दी (सस्कृत) बूदह व ईरानिया आरा वफारसी नक्ल नमूदा व अज़ खुद बाबहाय चद बर आ अफज़ूदा अद चुनाकि दर मुकद्दमाय कलीलाह इब्ने मुकफ्फा मस्तूर अस्त. दर ज़माने अनूशिरवा आदिल तबीबे ईरानी मौसूम ब बरज़ोई व अम्रे अनुशिरवा व हिन्दुस्तान रफ्ता आ किताब व बाज़े कुतबे दीगर रा व ईरान आवुर्द व व ज़ुबाने पहलवी कि जुबाने अदबीये ईरान दर आ ज़मान बूद तर्जुमा कर्द। अस्ल किताबे मजबूर व तरजुमा ए पहलवीये आ व कुल्ली अज़ बैन रफ्ता वले तर्जुमा कि इब्ने मुकफ्फा अज़ पहलवी व अरबी करदा खुशबख़्ताना बाकीस्त। ता ईं अवाख़र चुनी तसुव्वर मी शुद कि ईं तरजुमा कदीमतरीन मनशाय किताबस्त वले दर साले हज़ार-व-द्दीस्त व हश्ताद व हफ्त हिजरी तरजुमा सुरयानी अज़ कलीलाह पैदा शुद कि यक नफरे रूहानी ईस्वी मजहबे ईरानी (प्रोदपूत बूद) व साले पानसद व हफ्ताद मीलादी यानी नुह साल कब्ल अज़ वफाते अनूशरवां अज हमा नुसख़ाय पहलवी व सुरयानी तर्जुमा करदा अस्त। किस्मते अज़ कलीलाह व दिमनाह असली हनज़ दर

हिन्दुस्तान व जुवाने सस्कृत मौजूद व शामिले पज किताव अस्त कि आरा व जुवाने हिन्दी पञ्चतत्र मी नामद। ईं किताव यके अज़ मुहिम तरीन मनावे कलेलाह व दिमनाह रा तशकील मी दिहद। अज़ तरजुमाहाय मुहिमे कि अज रूये तरजुमाय अरवी इस्तशार याफ्ता यके तरजुमा व जुवाने अरवी व तरजुमा व जुवाने अस्पानि-यूली व दीगर व जुवाने ईतालयाई अस्त। इस्मे असली कलीलाह व दिमनाह व जुवाने हिन्दी कर्तिका व दिमनिका वूदा अस्त, हर्फे (रा) दर ज़ुवाने पहलवी तवदील व (लाम) शुदा व पस अज़ नक्ल व अरवी हर्फे (काफ) तवदील व (हाय) गैर मलफूज़ गरदीदा व अज़ आ कलेलाह व दिमनाह व वुजूद आमदा अस्त।[1]

ऊपर के उद्धरण में आप देखेंगे कि लेखक ने आडम्बरात्मक शैली के लिए अर्थ का वलिदान नहीं किया है। लेखक ने समस्त अनावश्यक अलंकरण से मुक्त सरल व्यञ्जनाओं का प्रयोग किया है। विश्वसनीय सूत्रों से विधिपूर्वक प्राप्त किए गए ऐतिहासिक तथ्यों को लेखक ने पाठक के समक्ष रखा है।

निम्नलिखित पाँचों उद्धरणों की तुलना से अध्येता को पिछले प्राय. हज़ार वर्षों के फारसी साहित्य के विकास का कुछ परिज्ञान हो जायगा।

१. फिरदौसी के शाहनामा से उद्धरण (द्वितीय व्याख्यान में) ।

---

१ कलीलाह व दिमनाह, करीव एडीशन तेहरान, पृ० ५

२. कलीलाह्-व-दिमनाह् वहराम शाही से उद्धरण (द्वि० व्या०)

३. अबू मंसूर के शाहनामा से उद्धरण (तृतीय व्याख्यान)

४. अनवारे-सुहैली (चतुर्थ व्याख्यान)

५. श्री करीव लिखित कलीलाह्-व-दिमनाह के प्राक्कथन से उद्धरण (चतुर्थ व्याख्यान)

(४) सारांश

संक्षेप में फारसी गद्य के विकास के इतिहास के सवंध में निम्न-लिखित तथ्य ध्यान देने योग्य है :

१. फ़ारसी गद्य ४ थी शताब्दी हि० / १० वीं शताब्दी ई० में सर्वांगपूर्ण रूप में प्रकट हुआ।

२. यह नया गद्य पहलवी और अरबी का एक सम्मिश्रण था।

३. साढ़े तीन शताब्दियो (४थी सदी ई० से ७वीं के पूर्वार्द्ध तक फारसी गद्य अपने चरमोत्कर्ष पर था।

४. आगामी साढ़े पाँच शताब्दियो (७वी सदी के उत्तरार्द्ध से १२वीं सदी हि०) में इसमें गतिरोध की स्थिति आ गई और वाद में इसका पतन हो गया। इस युग में रचे गये गद्य-ग्रंथ परिमाण की दृष्टि से पूर्वयुगीन रचनाओं से अधिक है; परन्तु गुण तथा मूल्य की दृष्टि से य निश्चय ही हीन है।

५. तेरहवीं शताब्दी हिजरी / १९ वीं शताब्दी ई० से फारसी गद्य को नया जीवन तथा रूप प्रदान किया गया है। इस

शती के गद्य-ग्रंथों की सामान्य सामयिक माग के अनुरूप रूपरेखा तथा आयोजना एकदम पाश्चात्य भाषाओं की-सी है।

६. फारसी गद्य की आगामी प्रगति का पथ अभी वता सकना सरल नहीं। यह भविष्य के लेखकों की योग्यता तथा शक्ति पर निर्भर है कि वे प्राचीन एश्वर्य की रक्षा करें, उसे समृद्ध बनाएँ और उसे विश्व के मुख्यतम साहित्यो की कक्षा में प्रतिष्ठित करे।

—×—
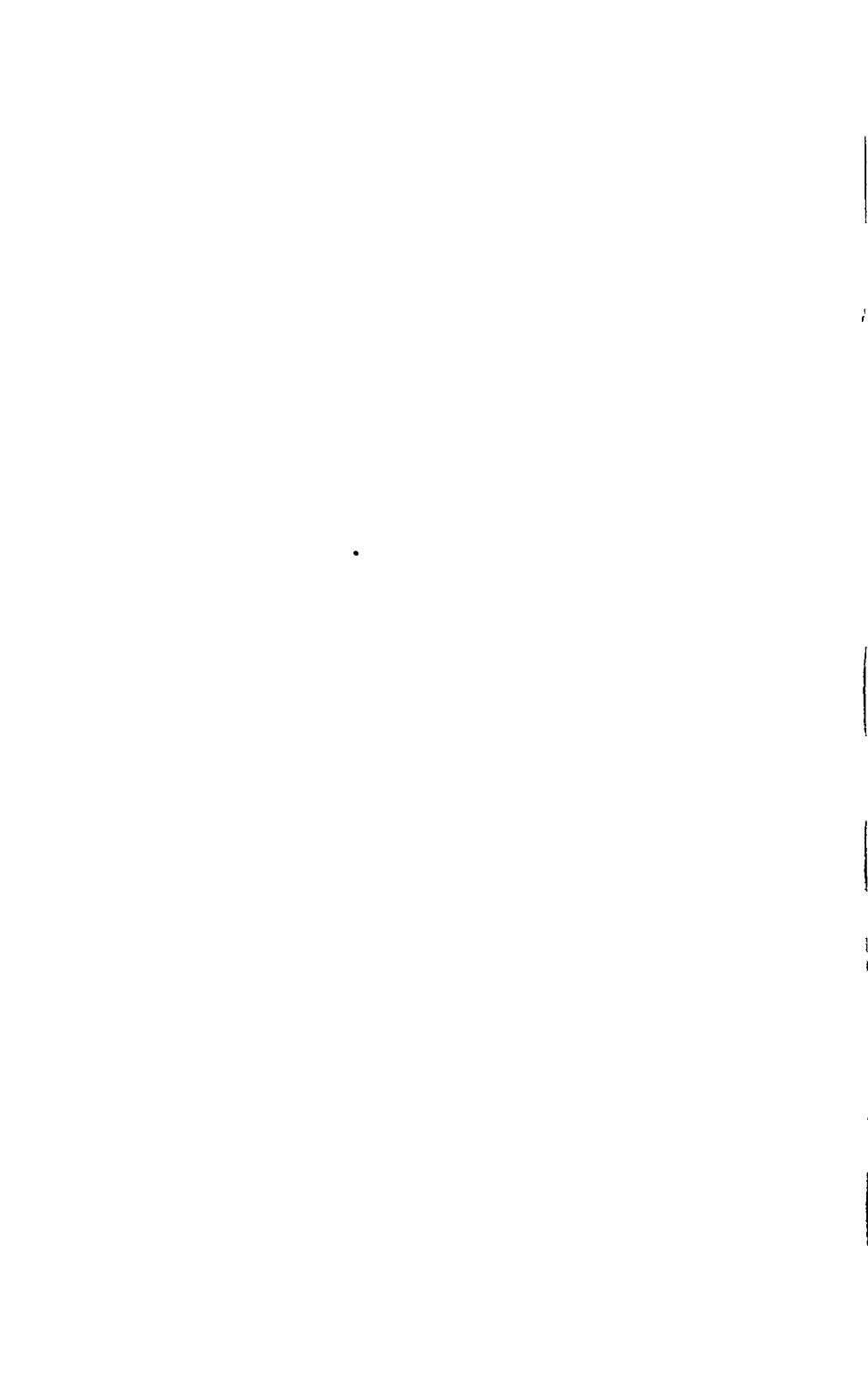
पंचम व्याख्यान

*

इस्लाम-पूर्व काव्य

*

रूपरेखा

प्राक्कथन : फारसी काव्य के मान

[१] प्राचीन ईरान का काव्य

[२] पहलवी भाषा के युग का काव्य

(अ) फह्लवियात (द्वितुकान्तपदी शेर)

(ब) स्वच्छन्द मस्नवी

(१) फख्र गोर्गानी कृत 'वीस-ओ-रामीन'

(२) निजामी कृत 'खुसरो-ओ-शीरीन'

(स) पहलवी काव्य के अपूर्ण खण्ड

(द) बहराम गोर की परम्परा : उसका काव्य, भारतीय खानाबदोशों की कहानी ।

[३] उपसंहार

[४] विशिष्ट पुस्तक-सूची
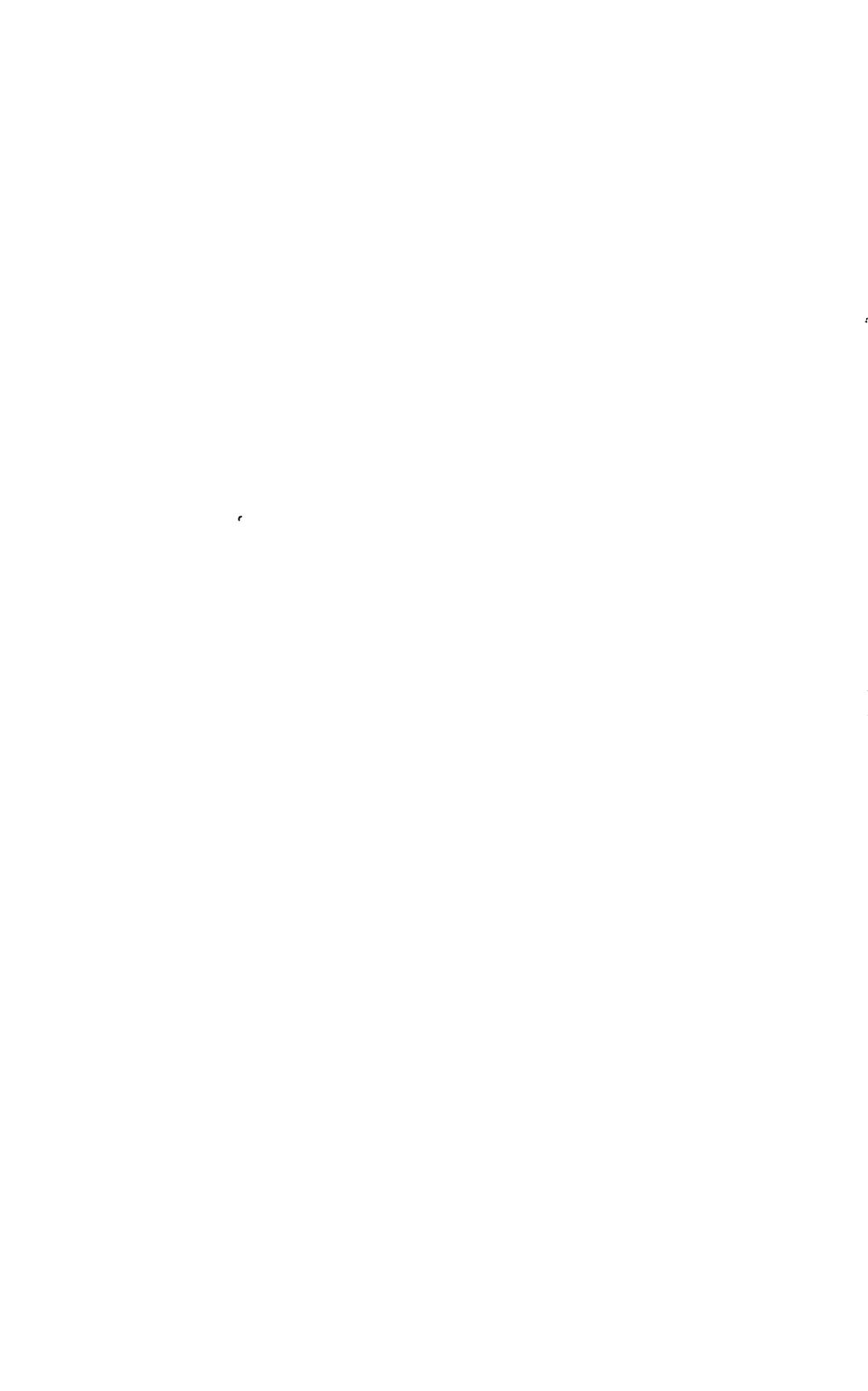
प्राक्कथन · फारसी काव्य का मान

कला और सौंदर्यप्रियता फारसी-भाषी जनता के राष्ट्रीय गुण माने जाते हैं। उसी प्रकार उनकी भाषा शालीनता, व्यंजना-सौंदर्य, कोमलता तथा भाव-गाम्भीर्य से युक्त है। इस भाषा में विशेषकर सुन्दर अपराग व्यग्य, आकर्षक रूपक और सूक्ष्म उपमाएँ एक से एक बढ़कर हैं। पश्चिम में ग्रीक और लैटिन तथा पूर्व में हिब्रु, अरबी और संस्कृत की ही तरह इस भाषा तथा इसको बोलनेवाली जनता के पास एक अमर साहित्य और सर्वोच्च कोटि का काव्य है।

संसार की भाषाओं में फारसी की यह विशेषता रही है कि उसके साहित्य की प्रमुख शाखा काव्य है और गद्य से अधिक श्रेष्ठ गीत रहे हैं। सादी की 'गुलिस्ताँ' जैसी गद्य-कृतियाँ भी सुन्दर व्यंजनाओं, अर्थ-सूक्ष्मता, तुकान्त छन्दों तथा अनुप्रास से इतनी अच्छी तरह अलंकृत हैं कि यद्यपि ईरानवासी उन्हें गद्य-ग्रंथ कहते हैं तथापि किसी विदेशी के लिए इन रचनाओ और शुद्ध काव्य में अन्तर कर सकना बहुत दुष्कर होगा।

ईरान देश सदैव आध्यात्मिक विचारों का क्रीड़ाक्षेत्र और धार्मिक आन्दोलनों का गढ रहा है, अतः ईरानियोने अपने भावों एवं विचारों के प्रकाशनार्थ हमेशा काव्य को वरीयता दी है। इसीलिए देश की राष्ट्रीय भाषा में अत्यन्त प्राचीन काल से स्तुति गीत तथा भजन न केवल विद्यमान रहे है, बल्कि इतिहास के लम्बे दौरान में निर्बाध

विकास के लिए निरंतर अत्यधिक प्रोत्साहन पाते रहे हैं। फलतः विश्व के साहित्यों में फारसी काव्य ने एक मूर्धन्य स्थान और स्पृहणीय ख्याति प्राप्त कर ली है। वास्तव में ईरान के सभी विचारको तथा संतों ने 'सखुन' शब्द या 'शाव' को काव्य का समानार्थक माना है। अपने सभी अन्तःप्रेरित तथा दृष्टिगत अनुभवों को व्यक्त करने के लिए उन्होंने इसी माध्यम को चुना है। इतिहास, पौराणिक कथाओ इत्यादि जैसे सामान्य विषय तथा चिकित्सा-विज्ञान, खगोल शास्त्रादि जैसे स्पष्ट विज्ञानों का क्षेत्र कोई भी हमारे कवि-विद्वानों द्वारा उपेक्षित न रहा। निम्नलिखित पद्य में सभी ईरानी लेखको का सही चित्रण है:

दर सुख़न पिन्हा शुदम मानिन्दे बू दर बर्गे गुल ।
हर कि मी ख़ाहद मरा, गो दर सुख़न जोयद मरा ॥

"मैं गीतों में उसी तरह लिप्त हूँ जिस तरह कमल की पंखुड़ी में सुगन्ध। जो भी मुझे खोजना चाहता हो उससे कह दो, वह मुझे काव्य में खोजे।"

प्राचीन ईरान के पौराणिक वृत्तों तथा पश्चात् कालीन युगों के वास्तविक इतिहास से युक्त फिरदौसी का 'शाहनामा' महाकाव्य मात्र ही नहीं है वरन् उसने यह प्रमाणित कर दिया है कि काव्य गद्य से श्रेष्ठ है। फिरदौसी का मत है कि गद्य-ग्रंथ काल-गति के साथ खो जाता है, परन्तु काव्य अमर रहता है, क्योंकि वह बुद्धि और आत्मा को आनन्द प्रदान करता है। उनका कथन है:—

व पैवस्त गोया ग्रागिदा रा।
बिसुफ्त ईंचुनी दुर्रे आगिदा रा।।
हदीसे प्रागिन्दा विप्रागनद।
चू पैवस्ता शुद मगजे जा आगनद ।।

[१] प्राचीन ईरान के काव्य

प्राचीन फारसी तथा अवेस्ता (७०० ई० पू० के लगभग) भाषाओं के युग से ही ईरान में धार्मिक विचारो के प्रकाशनार्थ लयात्मक रचना का प्रयोग प्रचलित था। उस युग की कविताओं के सर्वोत्तम नमूने, अल्पसंख्यक ही सही, अवेस्ता में प्राप्य है। अनन्त काल से धार्मिक कृत्य संगीत के साथ सम्पन्न किए जाते थे। अतः यह समीचीन है इन स्तुति-गीतों को प्राचीन काव्य मान लिया जाय। पिछले व्याख्यानों में विस्तारपूर्वक हमलोग अवेस्ता पर विचार-विमर्श कर चुके है। अतः यहाँ इतना कह देना पर्याप्त होगा कि इस पुस्तक के 'यश्त' जैसे कुछ भाग काव्यात्मक रूप में रचे गए है और 'अम्शासेपन्दान' के अभिनन्दन में लिखे गए गीतों से युक्त है। जैसा कि मै पहले कह चुका हूँ वर्तमान 'अवेस्ता' उस विशाल धर्मग्रंथ का एक छोटा-सा भाग है जो सासनी काल में विद्यमान था। वह सामान्यतः पशुचर्म पर स्वर्णाक्षरों में लिखा गया था और अग्निमंदिरो, इस्ताख्र-पापकान के विद्यालय, सासानी राजधानी और धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा के अन्य केन्द्रो में सुरक्षित रखा गया था।

'गाथा' नामक अवेस्ता का एक दूसरा भाग भी 'सर्वाद' के ही एक प्रकार के छंद में है। 'गाथाएँ' जिनका अर्थ है स्तुति-गीत, एक प्रकार का अष्टलयान्विति छंद है, और 'जरथुष्ट्र' को ही उनका रच-यिता माना जाता है। इस प्रकार उन्हें ईरान का प्रथम कवि माना जा सकता है।

पिछली शताब्दी के एक लेखक ने यश्तों तथा गाथाओं के आधार पर जोरोष्ट्रियन शिक्षाओं को निम्नलिखित पक्तियों में संक्षेप में वर्णित किया है :

दीने ज़रतुश्त कि रौशन ज़ि फ़ोगश दरो दश्त ।
पाया अश बर हुमतो हुख़्त वुवद वा होरश्त ॥
चमे ईना मनश्ण वाशद व गवश्ण व कुनश्ण ।
वी सुख़न रा हमा जा गुफ़्त चि दर गात व चि यश्त ॥
पाकिये फितरतो कौलो अमलत जाने तुरा ।
पाक साजद जि बदी वरना प्लीदी ओ पलश्त ॥[1]

: अनुवाद :

"संसार को अपने स्वर्गीक प्रकाश से आलोकित करने वाली ज़ोरोष्ट्रियन शिक्षाएँ' 'हमत, होख़्त और होरश्त' पर आधारित है। इसका अर्थ है विचार, शब्द और कार्य (की पवित्रता)। ये शिक्षाएँ गाथाओं तथा यश्तों—दोनों में उपस्थित है। विचार,

१. दीवाने सादिक फराहानी—तेहरान

भाषण और कार्य की पवित्रता तुम्हें पवित्र तथा पापमुक्त बनाती है अन्यथा, तुम पापी और अपवित्र रहते हो।"

अवेस्ता में सन्निहित काव्यात्मक विचारों का कुछ परिचय देने के लिए मैं ४४ वें यस्ना से एक अंश उद्धृत करता हूँ। इसमें ईश्वर तथा पैग़म्बर के बीच हुआ एक संवाद है:

अज़ तो मीपुरसम ए अहुरा व रास्ति मरा अज आ आगाह फरमा।
कीस्त आकसेकि रोजे नखुस्त अज आफरीनशे ख्वेश पिदर रास्ति गरदीद ?

कीस्त आकि व खुरशीद व सितारा राहे सैर विनमूद ?
कीस्त आकसेकि माह अजो गहे पुरस्त व गहे तही ?
ए मज्दा ई व वसा चीज़हाय दीगर रा मीख्वाहम विदानम।
अज़ तो मी पुरसम ए अहुरा व रास्ति मरा अज आ आगाही देह ?

कीस्त निगाहदारे ई ज़मी दर पाईं ?
व सपिह्र दर वाला कि व सूये नशेव फरूद नियायद ?
कीस्त आफरीनिन्दाय आवो ग्याह ?
कीस्त कि ववाद व अब्र तुन्दरवी आमोख्त ?
कीस्त ए मज्दा आफ़ीनिन्दाय मनशे पाक ?
अज़ तो मीपुरसम ए अहुरा व रास्ति मरा अज़ आ आगाह फरमा

कीस्त आफरीनिन्दाय रौशनाई ए सूदबख्श व तारीकी ?
कीस्त आफरीनिन्दाय ख्वावे ग्वुशीवख्श व वेदारी ?
कीस्त आफीनिन्दाय वामदाद व नीमरोज़ ?
व शब कि मरदुम रा वराय वजा आवुर्दन नमाज़ हमी खानद ?[१]

: अनुवाद :

"ए अहुरमज्दा ! मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ कि मुझे सत्य की ओर ले चलो।"

"अपने जन्म के प्रथम दिन से ही सत्य से कौन परिचित हुआ ?"

"सूर्य और तारों को किसने उनकी परिधि दिखाई ?"

"किसकी उपस्थिति से चाँद कभी पूर्ण, कभी रिक्त रहता है ?"

"हे मज्दा ! ये तथा अनेक और भी बातें मैं (जानना) चाहता हूँ।"

"हे अहुर ! मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ मुझे ठीक सत्य की ओर ले चलो।"

"नीचे की इस पृथ्वी का रक्षक कौन है ?"

"और ऊपर के आकाश का—जो कि निम्नगा ढाल की ओर नहीं आ जाता ?"

१—देखो डा० मोहम्मद मोइन कृत मज्दययस्त्रा और फारसी फारसी साहित्य पर उसका प्रभाव—तेहरान—पृ० ३० ८

"जल और वनस्पति का स्रष्टा कौन है?"

"किसने वायु और वारिद को चपल गति (की कला) सिखाई?"

"हे मज्दा, प्रकृति का निर्माता कौन है?"

"हे अहुर! मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ कि मुझे ठीक सत्य की ओर ले चलो।"

"उपयोगी प्रकाश और अंधकार का रचयिता कौन है?"

"जागरण और मधुर निद्रा का निर्माता कौन है?"

"प्रभात और मध्याह्न का स्रष्टा कौन है?"

"और रात्रि का—जो मनुष्यों को बुलाती है कि वे अपनी प्रार्थनाएँ अर्पित करें?"

[२] पहलवी भाषा के युग का काव्य

मैं पहले यह निरूपित कर चुका हूँ कि यूनानी आक्रमण (४ थी शताब्दी ई० पू०) से लेकर प्रायः देश पर अरब आधिपत्य स्थापित होने के बाद करीब तीन शताब्दियों तक ईरान में पहलवी भाषा प्रचलित थी। सासानी-काल में वह परिपूर्णता पा सकी। अपने शाहनामा में फिरदौसी ने कई अवसरों पर इस भाषा का उल्लेख किया है। अपनी एक सर्वोत्तम गज़ल में हाफ़िज़ ने भी पहलवी उद्बोधन गीतों का उल्लेख किया है। जिसे मैंने पिछले व्याख्यान में उद्धृत किया है।

इब्न मुकफ़्फ़ा ने 'ईरान की दरबारी भाषा' के नाम से पहलवी का वर्णन किया है। अतः काव्य और संगीतात्मक रचनाएँ भाषा

में अवश्य विद्यमान रही होंगी क्योंकि निस्संदेह राजाओ और क्षत्रपों के दरवार इन कलाओं की क्रीड़ाभूमि थे।

सच यह है कि सर्वश्रेष्ठ कोटि का काव्य इस्लामोत्तर युग में रचित पुस्तकों में परिलक्षित होता है, अर्थात् गंभीर संगीत और विशिष्ट स्पष्टता से युक्त काव्य के विदग्ध और प्रौढ़ रूप तीसरी और चौथी शती हि० तथा उसके आगे से आविर्भूत हुए।

[अ] फ़ह्लवियात शैर—तुकान्त द्विपदी

रूप की दृष्टि से इस युग के कुछ स्वरूपयोग (Patterns) मूलतः एकदम विशुद्ध ईरानी थे और यह नहीं कहा जा सकता कि वे ईस्लाम पूर्व युग के जाहेलिय्यात के अरबी छंदो की नकल हैं। मैं यहाँ पर उल्लेख करना चाहता हूँ कि 'दोबैती' नामक हल्की और सुन्दर तुकान्त द्विपदी इनमें से एक ध्यान देने योग्य प्रकार है। दोबैती 'चतुष्पदी' (रूबाई) के समान है। इसमें चार पद होते हैं जिनमें से प्रथम, द्वितीय और चतुर्थ परस्पर तुकान्तबद्ध होते हैं। इसकी चतुष्पदी की मात्राओं से इसकी मात्राओ में अन्तर होता है और वे इस प्रकार लिखी जा सकती हैं ⏑---। ⏑---। ⏑---, जो कि मफाईलन, मफाईलन, फऊलुन के बराबर है। पिंगल की भाषा में इस छंद को 'वहर हजज मुसद्दस महजूफ' कहते हैं। ईरान और अफगानिस्तान में दोबैती अब भी एक लोकप्रिय गीत है, विशेषकर ग्रामीणों तथा पहाड़ी जातियों में। इससे यह स्पष्ट है कि देश में इस्लाम-

प्रवेश के पहले ऐसे गेय गीत विद्यमान थे। फारसी में 'तराना' (लोक-गीत) कही जाने वाली इन तुकान्तद्विपदियों को इस्लामी आलोचकों ने 'फ़ह्लवियात' संज्ञा प्रदान की। इससे यह असंदिग्ध रूप से प्रमाणित होता है कि इनका मूल पहलवी भाषा से अवतरित है। और भी, रूप और छन्द में 'दोबैती' के सदृश कविताएँ न तो जाहेलिय्येह के अरबी काव्य में पाई जाती हैं और न उसकी इस्लामोत्तर रचनाओं में। ये लोक-गीत अपने प्राथमिक काल में अरबी शब्दो की छूत से बचे थे। बाद में अलबत्ता ऐसा प्रतीत होता है कि साहित्यिक आलोचको ने इनके साथ धींगाधींगी की और फलस्वरूप उनके शब्द-भंडार में परिवर्तन आ गए।

इस्लाम पूर्व युग से प्रचलित ऐसे गीतों के सर्वोत्तम उदाहरण वे हैं जिनके लेखक 'बाबा ताहिर उर्यान (४१० हि०। १०१९ ई०) माने जाते हैं। ये 'लोर' बोली में हैं, जो कि फ़ारस की पश्चिमी पहाड़ियों के कबीलों की बोली है। बाबा ताहिर की दोबैतियों[1] का एक सुन्दर अंग्रेजी रूपान्तर एलिजाबेथ कर्टिस ब्रेंटन ने किया था। विभिन्न जिलों से सात सौ दोबैतियों का एक सुन्दर संग्रह 'कूही करमानी' द्वारा संकलित और तेहरान में अभी प्रकाशित किया गया है।

यद्यपि इनमें से कुछ संक्षिप्त, भावप्रवण, लयात्मक और लोकप्रिय गीतों में प्रचुर मात्रा में रहस्य-चिंतन, इस्लामी दर्शनशास्त्र और

१—बाबा ताहिर का शोक; लंदन—१९०२।

पश्चात्कालीन सूफ़ियों का प्रभाव दिखलाई पड़ता है, तथापि ऐसे अन्य अनेक गीत हैं जो इस्लाम के सत्ताधारी होने के पहले के हैं और इसलिए उस धर्म और अरबी भाषा के प्रभाव से मुक्त हैं। इनकी स्वच्छता, सरलता, और भावापन्नता देखने योग्य है।

प्रथम उदाहरण :

१. खुरम आना कि हर ज़ामा तह् वीनन।
सुखन वाताह् करन वाताह् नशीनन ॥
गरम पाई न वे कायम तह् वीनम ।
वशम आनूँ ववीनम कि तह् वीनम ॥

(अनुवाद)

वे भाग्यवान् हैं, सुखी हैं कि जो तेरा दर्शन पा जाते हैं
करते निवास हैं साथ तुम्हारे, शब्दों पर रहते निर्भर;
है पास पहुँचना कठिन, दूर से होते हो तुम दृष्टिगोचर,
अतएव खोजता उन्हें कि जो नित तेरा दर्शन पाते हैं।

द्वितीय उदाहरण :

२. वहार आयो व हर वागे गुले वे ।
वहर शाखे हज़ारा वुलवुले वे ॥
वहर मर्ज़े निआरम पा निहादन ।
मवाद अज़ मू वतर सोता दिले वे ॥[1]

---

१. देखो—एडवर्ड हेरोन-ऐलन और एलिज़वेथ कर्टिस ब्रेंटन

(अनुवाद)

हर उपवन में हँसते गुलाब आयी बहार,
बुलबुल हजार शाखा-शाखा पर रही बोल;
कोई न तृणस्थल ऐसा जिस पर सकूँ डोल
मुझसे न अधिक दिलजला कहीं, परवरदिगार ![1]

तृतीय उदाहरण

३. बमू सोता दिलो हूँ ता बिनालेम ।
जि हिज्रे आ गुले राना बिनालेम ॥
बिशेम बा बुलबुले शैदा व गुलशन ।
अगर बुलबुल न नाला मा बिनालेम ॥

(अनुवाद)

साथ आओ दिलजलो ! मातम मनाना है,
म्लान-मृत है परम सुन्दर गुलाब रो जाओ;
बाग़ में है बावरी बुलबुल कि आ जाओ,
और जब वह रो चुकेगी, दुख मनाना है ।[1]

लिखित 'बाबा ताहिर का शोक'—लंडन १९०२—
पृ० ३८ तथा ७५ ।

१. बाबा ताहिर का शोक—पृ० २९ तथा ७१ ।

[व] स्वच्छन्द मसनवी

ईरानी प्रतिभा के विशेष अनुरूप एक दूसरा काव्यात्मक रूप है 'द्विपदी' (मसनवी)। जाहिर है कि जाहेलिय्यात के प्राचीन अरबी साहित्य में दीवैंती की तरह इसके सदृश कोई प्रकार नहीं। शायद 'अर्जूज़ेह' के सिवा, जो फारसी मसनवियो से एकदम भिन्न है। फारसी काव्य में पौराणिक वृत्त, लम्बी कहानियाँ, प्रगीत, महा-काव्य और उपदेशात्मक वर्णन जैसे लम्बे विषय इस छंद में चौथी शताब्दी हि० से ही, अर्थात् ईरानी पुनर्जन्म और स्वातंत्र्य के युग में लिखे जाते थे।

फिरदौसी का 'शाहनामा' जिसकी सृष्टि उसी शताब्दी में हुई, महाकाव्य का सर्वोत्तम उदाहरण है। इसके बाद असदी के 'गर-शास्पनामा' का स्थान है जिसकी कथावस्तु है भारत में एक ईरानी नायक का पराक्रम। दोनों देशो में इस्लाम-प्रसार के पूर्व हिन्द-ईरानी संबंध कैसे थे उनके विषय में बहुत उपयोगी जानकारी इस पुस्तक में मिलेगी।

यह भी कह देना उचित है कि यह प्रकार सासानी-युग में ही विशेष मान्य था। इस्लाम-युग की प्राथमिक शताब्दियो में इसका विकास हुआ। क्रमशः पाँचवीं और छठी शताब्दी हि० में रची गई दो लम्बी मसनवियों द्वारा प्राचीन पहलवी काव्य को

१ गरशास्पनामा—तेहरान।

स्मृति पुनर्जीवित की गई। इन कविताओं में दो प्रेम-कथाएँ वर्णित हैं जिनका उत्स है पहलवी लोक-कथा। उनके वर्तमान रूपान्तर से स्पष्ट है कि वे पहलवी स्रोतों के लिए गए थे।

(१) वीस-ओ-रामीन—यह वीस और रामीन नामक दो प्रेमियो की कहानी है। यह प्राचीन पहलवी कथा आधुनिक फारसी कविता में ४४६ हि० में फख़रुद्दीन असद गुर्गानी द्वारा अनूदित की गई (गुरगान ईरान के उत्तर में स्थित एक नगर है)। इस मसनवी की ख्याति मधुर छंदो, सुन्दर भाषा और मोहक उपनामों के कारण है। इस कथा के सभी नायक ईरानी हैं और कवि ने उनका कार्य-मंच भी ईरान देश ही रखा है।

यह एक रोचक बात है कि एक शब्द के तीन रूप हैं, "सर्वा, सर्वाद, सरूद", और इन सबका अर्थ है काव्य। ये पहलवी से अवतीर्ण हैं। इनमें से एक का प्रयोग दक्षिणी ईरान के कुछ दूरस्थ भागों में अब भी उसी अर्थ में होता है। हमारे फ़ख़रुद्दीन गुर्गानी ने भी 'सर्वा' का प्रयोग किया है और कहा है—

अलूवे पायाय ज़ाहश अज़ा वुलन्दतर अस्त।
कि फिक्रे हमचो मने अन्द्रो कुनद सरवा॥

. अनुवाद .

"जिसे समझकर मेरी कल्पना उसके विषय में कविता लिख सके उससे कहीं बढ़कर उसकी प्रतिष्ठा की श्रेष्ठता है।"

यह महत्त्वपूर्ण बात ज्ञातव्य है कि 'वीस-ओ-रामीन' में प्रयुक्त छंद (अर्थात्, बहर हज़ज मुसद्दस महज़ूफ) ठीक दोबैती का-सा है और इस्लाम-पूर्व ईरान में इस प्रकार की अविस्थिति का दूसरा प्रमाण प्रदान करता है। निम्नलिखित दो छंद इस मसनवी से हैं। इनमें एक बड़ी मधुर उपमा है। आशिक (प्रेमी) अपनी प्रेमिका से कहता है—

निगारा तू गुले सुर्ख़ी ओ मन ज़र्द।
तू अज़ शादी शिगुफ़्ती ओ मन अज़ दर्द ।।
बया आ सुर्ख़ गुल बरज़र्द गुलनेह।
कि दर बाग ईं दो गुल बा यक दिगर बेह ।।

: अनुवाद :

प्रिय ! तुम लाल गुलाब हो और मैं पीला,
तुम्हारा सौंदर्य सुख के कारण है, मेरा दुःख के कारण;
आओ ! वह लाल गुलाब पीले गुलाब पर रख दो,
क्योंकि यह बेहतर होगा कि दोनों गुलाब उपवन में साथ रहें।

(२) ख़ुसरो-ओ-शीरीन—ख़ुसरो-ओ-शीरीन में सासानी राजा ख़ुसरो परवेज़ (५९०- ६२८ ई०) तथा उसकी आर्मीनियन प्रेमिका शीरीन के प्रेम का वर्णन है। इसके रचयिता थे गंजा के 'निज़ामी' (५८० हि०/११८४ ई०)। यह प्रेम-कथा सासानी स्रोतों से ली गई है। यह वीस-ओ-रामीन के छंद में रची गई है। यद्यपि कवि ने अपने

समय (६वीं शताब्दी हि०) से प्रभावित होकर अरबी शब्दों और मुहावरों का अधिक प्रयोग किया है तथापि सासानी युग के साहित्यिक तत्व इस मसनवी में स्पष्टतया दृष्टिगोचर होते हैं । एक अवसर पर, ख़ुसरो के प्रसिद्ध दरबारी संगीतज्ञ 'बार्बुद' का हवाला देते हुए, जो अपनी सितार पर तीस रागनियाँ बजाते थे, निज़ामी ने सुन्दर श्लेषों तथा रूपको में तीस लयो के नाम गिनाये हैं । ये नाम स्वयं आलंकारिक हैं । वर्णन इस प्रकार है :

सितारे बारबुद आवाज़ दर दाद ।
समाय अर्गनू रा साज़ दर दाद ।।
ज़ि सद दस्ता कि ऊरा बूद दमसाज़ ।
गुज़ीदा कर्द सी लहने ख़ुश आवाज़ ।।
ज़ि ख़ुश लहने दरा सी साज़ चूँ नोश ।
गहे दिल दादी ओ गह बिस्तदी होश ।।

: अनुवाद :

"देखो ! बार्बुद की सितार पुकार रही है,
वाद्ययंत्रों की रागिनी भी समन्वित है;
सुपरिचित सौ लयों में से
उन्होंने तीस आनन्दप्रद रागनियों को चुना है,
इन तीस लयों का मधु-माधुर्य
कभी हृदय जीत लेता है, कभी बेसुध बना देता है !"

इन सुन्दर पंक्तियों में संगीतात्मक शब्दों का प्रयोग यह सूचित करता है कि ईरानी राजाओं और क्षत्रपों के दरबार में सारंगी के साथ काव्य-पाठ किया जाता था।

[स] पहलवी काव्य के अपूर्ण खण्ड

एक फ्रांसीसी प्राच्यविद्या-शास्त्री, श्री बेंनेवेनिस्त ने पहलवी कविताओं के कुछ सुन्दर टुकड़ों को खोज निकाला है। उक्त महोदय पेरिस विश्वविद्यालय में प्राचीन ईरानी भाषाओ के एक प्रमुख प्राध्यापक है। इन काव्य-खण्डों में भाषा और अर्थ के सभी अलंकार उपस्थित है। इनमें से प्राचीनतम में खजूरवृक्ष तथा बकरी के बीच का एक विवाद है जिसमें प्रत्येक पक्ष इस आशय का तर्क प्रस्तुत करता है कि वह दूसरे से बड़ा है।

यद्यपि उक्त खण्ड, जिसका नाम है 'दरख़्ते आशुरीक,' संक्षिप्त और खण्डित है, तथापि वह पहलवी काव्य का एक महत्त्वपूर्ण उदाहरण है। श्रीयुत बेनेवेनिस्त द्वारा फ्रांसीसी में अनूदित एक ग्रंथ से इसके स्तर का पता लग जाता है और दुःख होता है कि न जाने कितनी विशाल राशि लुप्त हो गई।[१]

[द] बहराम गौर की परम्परा

सम्राट् बहराम गौर (४२०-४३८ ई०) की परम्परा बहुत महत्त्वपूर्ण है। कवियों के जीवन-लेखकों ने इन्हें प्रथम ईरानी कवि

---

१. लिगेसी ऑफ पर्शिया—पृ० २०३।

कहा है। कहा जाता है कि अरबी 'रजज' के अनुकरण पर उसी कविता का एक प्रकार उन्होंने फारसी में आविष्कृत किया। अपना प्रारम्भिक जीवन अरबों में बिताने के कारण, उन्होंने जाहलिय्यत के वीर अरबों की शैली में आत्म-प्रशसा की कविताएँ लिखीं। निम्नलिखित गीत उन्हीं का लिखा माना जाता है—

मनम आ वन्रे दमा व मनम आ शेरे यला।
नामे मन वहराम गोर व कुनयतम वू जवला॥

: अनुवाद :

"मैं वह सवल व्याघ्र हूँ, मैं वह वीर केसरी हूँ,
मेरा नाम वहराम गौर है और मेरा कुनियेह वू-जवलह है।"

ऐतिहासिक पुट के अभाव में यदि इस परंपरा को मिथ्या ही माना जाय, तो इस नहीं हर्गिज इनकार किया जा सकता कि यह महान् सासानी सम्राट् काव्य और सगीत में गहरी दिलचस्पी लेता था। फिर, यह वही शासक था जो अपने देश में अपने साथ भारतीय संगीतज्ञो तथा चारणों की एक टोली लाया था। कहा जाता है कि वह अपनी प्रजा की सुख-वृद्धि के हेतु सचेष्ट रहता था। एकबार उसे वताया गया कि यद्यपि लोग ढ़ंग से जीवन-निर्वाह कर रहे हैं तथापि मद्यपान के उत्सवों में उनका मनोरंजन करने के निमित्त पर्याप्त संगीतज्ञों का अभाव है। वहराम गौर ने तत्काल एक दूत भारतवर्ष के तत्कालीन शासक शंगल (?) के पास इस प्रार्थना के साथ भेजा कि वे ईरान में संगीतज्ञ भेज दें। इस मांग

की पूर्ति हेतु शंगल ने सारंगी सहित दस हजार चारण भेज दिए जो ईरान के सभी गांवों और शहरों में फैल गए। शाहनामा इसे यूँ वर्णन करता है :—

वजा पस वहर मूवदे नामा कर्द। कसे रा कि दरवेश बुद जामा कर्द॥
बिपुरसीद शा गुफ्त वे रज कीस्त। वहर जाय दरवेशो वे गज कीस्त॥
ज़ि कारे जहा यकसर आगह कुनेद। दिलम रा सूये रौशनी रह कुनेद॥
व्यामदश पासुख जि हर मूवदे। ज़ि हर नामदारे व हर बिख़रदे॥
कि आबाद बीनेम रूये ज़मी। व हर जाय पैवस्ता शुद आफ़ी॥
मगर मर्दे दरवेश कज़ शहरयार। बिनालद हमी वज़ बदे रूज़गार॥
कि चू मै गुसारद त्वागर हमी। बसर बर ज़ि गुल दारद अफसर हमी॥
बर आवाज़े रामशगरा मै खुरद। कि मा मर्दुमा रा बकस नगमुरद॥
तही दस्त बे रूदो गुल मै खुरद। शहिनशाह अज़ी दर यके बिनगरद॥
बिख़न्दीद अज़ी नामा बिसयार शाह। हयूने बर अफगद पूया व राह॥
ब नज़दीके शगल फरिस्ताद कस। चुनी गुफ्त कै शाहे फरयाद रस॥
अज़ा लूरिया बरगुज़ी दह हजार। नरो मादा बर ज़ख्मे बरबत सवार॥
कि उस्ताद बर जख्मे दस्ता बुवद। वज आवाज़े ऊ रामशे जा बुवद॥
चो नामा ब नज़दीके शगल रसीद। सर अज फख्र बर चर्खे गरदूँ कशीद॥
हमा गाह शगल गुज़ी कर्द जूद। जि लूरी कुजा शाह फरमूदा बूद॥
चु लूरी ब्यामद बनज़दीके शाह। बिफरमूद ता बर गुशादद राह॥
कुनद पेशे दरवेश रामशगरी। बरा रायगानी कुनद किहतरी॥[1]

[1] शाहनामा—तेहरान, पृ० ४११।

कुछ विद्वानो का विश्वास है कि संसार भर की खानाबदोश जातियाँ (जिनका प्रमुख पेशा गाना और सारंगी बजाना है) उन लूरियाँ या लूलियाँ (खानाबदोशो) की वंशज है जो बहराम गौर के शासन काल में भारत से ईरान गए।

[३] उपसहार

ऊपर दिए गए तथ्यों से प्रमाणित होता है कि इस्लाम-पूर्व ईरानियों के बीच एक सुविकसित काव्य और संगीत-कला विद्यमान थी।

ऐसा माना जाता है कि अरब-आक्रमण के बाद की तीन शताब्दियो (७ से ९वीं शताब्दी ई०) तक दो जातियो, दो विचारधाराओं तथा दो भाषाओ के सम्मिश्रण के कारण काव्य दबा पड़ा रहा। परन्तु १०वीं शताब्दी में ज्योंही पूर्वी तथा उत्तरी ईरान में राष्ट्रीय जीवन पुनरुज्जीवित किया गया और इन क्षेत्रो ने स्वतंत्रता प्राप्त कर ली, त्योंही शाश्वत अग्नि (काव्य) पुनः प्रज्वलित हो उठी। जो बीज पिछले कुछ काल तक गड़े पड़े रहे उनसे शाखायें फूटीं और वह शीघ्र एक शक्तिशाली वृक्ष के रूप में विकसित हो गया, यहाँ तक कि हजार वर्ष बीत जाने पर भी उस वृक्ष की ताजगी और सुन्दरता बनी हुई है और वह बहुरंगी कलियों और फूलों से लदा है।

[४] विशिष्ट पुस्तक सूची

फारसी साहित्य के जो छात्र ईरान के इस्लामपूर्व काव्य का अध्ययन करना चाहते हैं, उनसे निम्नलिखित पुस्तको को पढ़ने की सिफारिश की जाती है :—

१. [अ] मुज्दे यसना-ओ-तासीरे आं दर अदबियाते फारसी—डॉ मुहम्मद मुईन तहरान, १३२७।

[ब] ईरान दर जमाने सासानियाँ—अनुवादक: रशीद यासमी तहरान—। १३१७

२. अंकेतिल दु पेरान : जेंद-अवेस्ता, पैरिस—१७७१।

३. ई० जी० ब्राउन : फारस का साहित्यिक इतिहास —प्रथम खण्ड

४. क्रिस्तेसेन : ला'इरान सास ले सासानीद्स कोपनहैगन. १९३६।

५. जे० दारमेस्तेतर : (१) एत्यूद्स ईरानियंस—दो खण्ड, पैरिस १८८३।
(२) ला जेंद अवेस्ता—तीन खण्ड, पेरिस, १८९२-९३।
(३) ला ओरिजिंस द ला पोएजी परसियन, पैरिस १८८७।

६. गीगर : ओगेमादेत्शा

७. हार्लेज : मैनुएल दु पहलसवी दे लिवरेस रेलिज्यूसएल लस्तोग्स दे ला पर्सी

८. जैक्सन : आदि फ़ारसी गद्य

९. मीनास्कीं : बीस-ओ-रामीन—पार्थियन रोमास (बी० एस०ओ० ए० एस०—१९४६—११/४)

१०. मोइन : एक काव्य-खण्ड : प्राचीन फ़ारसी तेहरान, १९४४ ।

११. नोल्डके : ईरानी राष्ट्रीय महाकाव्य या शाहनामा, बोगादानोफ द्वारा अनूदित । (के० आर० कामा ओरियण्टल इंस्ति-च्यूट पब्लिकेशन सं० ७)

१२. एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका ।

—×—

स्परे

[१]

[२]

[३]

षष्ठ व्याख्यान

*

इस्लामोत्तर काव्य

*

रूपरेखा

[१] फारसी काव्य की उत्पत्ति और प्रपूर्णता

[२] फारसी काव्य का विस्तार-क्षेत्र

[३] फारसी काव्य के शृंगार—कुछ महान् विभूतियाँ :

(क) फिरदौसी

(ख) खय्याम

(ग) मौलवी

(घ) निज़ामी

(ङ) सादी

(च) हाफिज़

(छ) वहशी

(ज) जामी

[१] फारसी काव्य की उत्पत्ति और प्रपूर्णता

जैसा कि मैं पिछले व्याख्यान में कह चूका हूँ, फारसी-काव्य तत्भाषाभाषी जनता के कोमल मस्तिष्क, तीक्ष्ण व्युत्पन्नमति और कलात्मक अभिरुचि की उपज है। इसका मूल प्राचीन है और इतिहास के किसी काल विशेष तक सीमित नहीं है। 'साइरस' के शासन के बहुत पहले के युग से (५४६ ई० पू०), जब कि पुराने धर्म-गीत ईरान में गाये जाते थे, आज तक यह दिव्य अग्नि ईरानियों के हृदय में प्रज्वलित रखी गई है। यह कहना चाहिए कि सरस्वती कभी इस देश के निवासियो की ओर से उदासीन नहीं रहीं। परन्तु अरब-आक्रमण तथा आर्य और सेमेटिक दो बड़ी जातियों के मिश्रण के पश्चात् उस प्रारभिक काव्य का होनहार बिरवा एक प्रौढ़ और प्रभविष्णु वृक्ष के रूप में विकसित हुआ और सुन्दर कोपलो तथा सुस्वादु फलो का वाहक वना।

जीव-विज्ञान-वेत्ताओं का मत है कि एक ही जाति के दो गोत्रो के संगम से ऐसी संतान उत्पन्न होती है जो अपने माता-पिता से सामान्यतया आकृति में मिलती-जुलती होने पर भी रूप और गुण दोनों में उनसे वढ कर होती है। इस स्थापना के समर्थन में मानव, पशु और वनस्पति-जीवन से अनेक उदाहरण दिये गये हैं। पिछली कई सहस्राब्दियो से विभिन्न जातियो की सम्मिलन-भूमि होने के कारण भारतवर्ष जीवविज्ञान के इस सिद्धान्त की सत्यता के अनेक उदाहरण प्रस्तुत करता है। जिस शाहजहाँ की कलात्मक अभिरुचि

ने अपने युग की अमर स्थापत्य-शैली का विधान किया, वह एक तातार पिता और भारतीय माता की संतान था। उसी प्रकार भारत के एक महान् कवि तथा इस उपमहाद्वीप में फारसी-काव्य के अग्रदूत अमीर खुसरो के पिता तुर्क थे और उनकी माता एक भारतीय महिला थीं।[1]

यह प्राकृतिक नियम ठीक वैसे ही देशों तथा जातियों पर भी लागू होता है, जिन्होंने क्रामवेल और शेक्सपियर तथा बहुसंख्यक राजनीतिज्ञों, वैज्ञानिकों और साहित्यिकों को जन्म दिया तथा जो संसार के सर्वाधिक प्रगतिशील देशों में से एक (के निवासी) हैं, वे अंग्रेज सैक्सन और नार्मन जातियों के सम्मिश्रण का प्रतिफल है।

यह जातीय अंतर्मिश्रण भले ही कुछ अति जातीयतावादी राष्ट्रों के लिए बहुत प्रिय न सिद्ध हुआ हो, परन्तु मनुष्य की सामाजिक रूढ़ियाँ प्रकृति के नियम को नहीं बदल सकतीं। जहाँ युद्धों या शांतिप्रिय संबंधों के फलस्वरूप ऐसे जातिमिश्रण हुए हैं वहाँ निस्संदिग्ध रूप से मानव-जाति की प्रगति के साधक अत्यन्त शुभ परिणाम देखे गए हैं। ईरानी इतिहास इस प्राकृतिक प्रभाव का सर्वोत्तम उदाहरण प्रस्तुत करता है।

मदायन के पतन और सासानियों के विच्छिन्न होने के बाद तीन शताब्दियाँ बीत गईं। इस बीच आधुनिक फारसी ने जन्म, विकास

---

१ किरानुस-सआदैन—अलीगढ, १६१८।

ग्रौर प्रगति के विभिन्न सोपानों को पार किया। ग्रंत में चौथी शताब्दी हि० के प्रारंभ में ग्रार्य ग्रौर सेमिटिक जातियों के महान् जातीय गुणों की वारिस इस नवजात ईरानी-ग्ररबी जाति ने ग्राधुनिक ईरान को जन्म दिया। तब से इसने ससार को ग्रनेक ग्राश्चर्यजनक उपहार दिए जिनमें से एक है 'फारसी काव्य'।

[२] फारसी काव्य का विस्तार-क्षेत्र

भाषा, साहित्य, दर्शन तथा धर्म-सक्षेप में, फारसीभाषी जनता के विज्ञानों तथा उसकी कलाग्रो के क्षेत्र का सर्वस्व, फारसी-काव्य के माध्यम से बाहर प्रसारित किया गया। फारसी-काव्य के विशाल वृत्त की सीमा रेखा एक ग्रोर बंगाल की खाडी का ग्रौर दूसरी ग्रोर भूमध्य सागर का तटचुंबन करती थी।

इस विषय को स्पष्ट करने के लिए मैं चार महाकवियो के जीवनो का उल्लेख करूँगा जो ६ठीं ग्रौर ७वीं शताब्दियो हि० / १२-१३ शताब्दी ई० में हुए थे। वे लगभग समकालीन थे, एक-दूसरे के समय से १०० वर्ष के भीतर विद्यमान थे ग्रौर तत्कालीन सभ्य संसार की चारों दिशाग्रों में जीवन व्यतीत कर चुके थे। फारसी-काव्य के ग्रत्यन्त निखरे प्रकारों में वे ग्रपने गौरवग्रंथ छोड गए हैं। वे हैं:—

१. पूर्व में : 'अमीर ख़ुसरो'[1] (मृ० ७२५ हि०/१३२४ ई०) कुल्लियात और ख़म्सा (पाँच मसनवियां) के रचयिता, भारत के महत्तम कवियों में से हैं। उनका जन्म पटियाली में और निर्वाण दिल्ली में हुआ।

२. पश्चिम में : 'जलालुद्दीन मुहम्मद', साधारणतः "रूमी" के नाम से प्रख्यात, (मृ० ६७२ हि० / १२७३ ई०) कूनियेह (एशिया-माइनर) में रहते थे। उनकी अमर रचनाओं में वह मसनवी है जो सदैव रहस्यवाद और आचारशास्त्र का एक स्तम्भ बनी रहेगी।

३. उत्तर में : 'निज़ामी', (मृ० ६०० हि० / १२०४ ई०) उनकी पाँच मसनवियाँ रहस्यवाद, आचार-संबंधी और पौराणिक काव्य की पाँच मणियाँ हैं। वे गंजा (काकेशिया) में पले और वहीं मरे।[2]

---

१. अमीर ख़ुसरो पटयाली (उत्तर-प्रदेश में पैदा हुए थे।)
—अनुवादकर्त्ता

२ उसी युग में, एक दूसरे महान् लेखक, बद्र चाची, आधुनिक ताशकंद के शाश नगर में पले थे जो कि जक्सार्टिस या सेहुन के 'उत्तर' में स्थित है। यद्यपि उनकी कुछ ही कविताएँ बची हैं, पर जो बची हैं वे सुदूर उत्तर के काव्य का सच्चा प्रतिनिधित्व करती है।

४. दक्षिण में : 'मुशर्रफुद्दीन मुस्लेह सादी', (मृ० ६९० हि० / १२९१ ई०), उनके दो विशालकाय ग्रंथ गुलिस्ताँ और वोस्ताँ सदैव अमर रचनाओं के समान संस्मरणीय रहेंगे। यह महान् लेखक शीराज में रहा।

[३] फारसी काव्य के शृंगार—कुछ महान् विभूतियाँ

क्योंकि फारसी काव्य ईरानी विचारको और दार्शनिको के प्रशिक्षण की पाठशाला वन गया है, अतः इसी माध्यम के द्वारा इस जनता की विद्वत्ता व्यक्त हुई और इस राष्ट्र के विचार वाहर प्रसारित किए गए।

(क) फिरदौसी

फारसी काव्य के इस महान् निकाय ने सर्वोपरि तूस के अबुल-क़ासिम फिरदौसी को विश्व के एक महाकाव्य 'शाहनामा' की सृष्टि के लिए (पूर्ण हुआ लगभग ४०० हि०) एक अवसर प्रदान किया जो यूनानियों के इलियड और भारतीयो के महाभारत से होड़ लेता है। उन्होने ठीक ही कहा है :

जहाँ कर्दा अम अज सुखन चू वहिश्त । अज़ी पेश तुख्मे सुखन कस न किश्त ।।
वसे रज वुदर्म दरी साल सी । अजम ज़िन्दा करदम वदी पारसी ।।
विनाहाय आवाद गर्दद खराव । ज़ि वारान व अज़ ताविशे आफताव ।।

पै अफगदम अज़ नज्म काखे बुलद । कि अज़ वाद व वारा नियावद गुज़द ।।
वर ईं नामावर उम्रहा विगुज्रद । वखानद हर आकस कि दारद ख़िरद ।।
न मीरम अज़ी पस कि मन ज़िन्दा अम । कि तुख्मे सुख़न रा प्रागिन्दा अम ।।
हर आकस कि दारद हुश व राय व दी । पस अज़ मर्ग वर मन कुनद आफ़ी ।।[1]

: अनुवाद :

"मैंने अपने शब्दों से संसार को स्वर्ग बना दिया है; इसके पहले किसी ने काव्य के बीज (इतनी अच्छी तरह) नहीं बोये थे।

मैंने इन तीन वर्षों में अनेक कष्ट सहे; मैंने इस फारसी के द्वारा अजम को पुनः जीवित कर दिया।

वर्षा और सूर्य के ताप से अनेक समृद्ध भवन नष्ट हो जाते हैं।

मैंने अपनी कविता से एक ऐसे उच्च प्रासाद की प्रतिष्ठा की है जिसे वर्षा और आँधियाँ भी कोई क्षति नहीं पहुँचा सकतीं।

यह पुस्तक युगों तक रहेगी और जो बुद्धिमान् हैं वे सभी लोग इसे पढ़ेंगे।

अब मैं नहीं मरूँगा, क्योंकि अपने वक्तव्य द्वारा मैं अमर हो गया हूँ।

जिसके भी पास बुद्धि, न्यायशक्ति और श्रद्धा होगी वह मृत्यु के अनंतर मेरी प्रशंसा करेगा।"

---

१. शाहनामा

(ख) खैयाम

महान् गणितज्ञ-दार्शनिक उमर खैयाम भी इसी निकाय के हैं जिनकी अमर रुबाइयाँ भौतिक जगत् के क्षणभंगुरत्व का वर्णन करती हैं, जीवन के रहस्यों का उद्घाटन करती हैं और विश्व की शक्तिमत्ता और महत्ता के समक्ष मनुष्य का क्षुद्रत्व व्यक्त करती हैं।

उनका कथन है :

यक कतराय आब बूद व बा दरया शुद ।
यक ज़र्राय खाक वा ज़मी यकता खुद ।।
आमद शुदने तो अन्द्री आलम चीस्त ।
आमद मगसे पदीद व नापैदा शुद ।।

: अनुवाद :

"अरे आया क्यों जग के बीच !
कहाँ से तृण-सा मुझको तोड़,
बहा लाई है कोई धार,
गई जो जगती-तट पर छोड़ !

दर दायराय कि आमद व रफ्तने मास्त ।
ऊरा न विदायत न निहायत पैदास्त ।।
कस मी न ज़नद दमे दरी मानी रास्त ।
की आमदन अज़ कुजा व रफतन व कुजास्त ।।

: अनुवाद .

जगत क्यों देना होगा छोड़ ! कहांको, रज-कण मुझको जान,
उड़ा ले जाएगा दिन एक किसी मरु का पवमान महान् ?
विगत दिवस ने ही रच डाला, आज दीखता जो पागलपन,
औ'कल की जय-शान्ति-निराशा, किए हुए जो जग को उन्मन;
पियो, क्योंकि तुम नहीं जानते, किस थल से क्यों आए हो तुम,
पियो, क्योंकि तुम नहीं जानते, कहां किसलिए जाओगे तुम।

(ग) मौलवी

इस विशाल निकाय के एक दूसरे सदस्य हैं जलालुद्दीन मुहम्मद बल्खी, जो 'रूमी' के नाम से प्रख्यात हैं। कथाओं, उदाहरणों तथा प्रसंगों में अपने भावप्रवण गीतों की उपमा, रूपक तथा अपरांग व्यंग्य द्वारा उन्होंने हमें विश्व के अनेक रहस्य बताए हैं। अणु और परमाणु के नियम का पता भौतिक वैज्ञानिकों के लगाने के बहुत पहले केवल अंतश्चक्षु से रूमी ने पा लिया था और इस नियम का निरूपण उन्होंने अपनी सरल और मार्मिक काव्यात्मक भाषा में किया था।

वे कहते हैं :

हर नफस नौ मीशवद दुनिया व मा। वे खबर अज़ नौ शुदन अन्दर बका ।।
उम्र हमचू जूये नौ नौ मी रसद। मुस्तमर्री मी नुमायद दर जसद ।।
आ ज़ि तेज़ी मुस्तमर्र शक्ल आमदस्त। चू शरर किश तेज जुंबानी बदस्त ।।

शाखे आतिश रा व जुवानी बिसाज । दर नजर आतिश नुमायद वस दराज़।।
ई दराज़ी मुद्दत अज़ तेज़ी सुनआ । मी नुमायद सुरअत-अंगेजी सुनआ ।।

: अनुवाद :

"प्रत्येक क्षण हम और ससार परिवर्तित होते जा रहे है और हमें इस परिवर्तन का ज्ञान नहीं।

जीवन उस सरिता के समान है जिसका जल निरंतर बदल रहा है। जब कि शरीर निरंतर बदल रहा है, आत्मा स्थिर है।

इस परिवर्तन की त्वरा इसे ठीक वैसे ही सातत्य का रूप प्रदान करती है, जैसे चल स्फुलिंग, जो अटूट प्रकाश का भ्रम उत्पन्न करता है।

यदि एक मशाल एक ओर से दूसरी ओर घुमा दी जाय तो वह अग्नि का लंबा स्तम्भ-सा प्रतीत होगी।

समय का विस्तार और सृष्टि की गति रचनात्मक सत्ता के परिचायक हैं।

(ध) निज़ामी

इसी निकाय के सदस्य हैं गंजा के निज़ामी। केपलर (१५७१ ई०) और ला-प्लेस (१७४९ ई०) जैसे वैज्ञानिक जब अपनी वैज्ञानिक प्रणालियो और गणित की सुस्पष्ट गणनाओं द्वारा विश्व तथा सौर जगत् की विराटता नहीं प्रमाणित कर सके थे, उसके पहले निज़ामी ने कहा था:।

जमी दर जंबे ई नुह काखे मीना ।
चो खशखाशेस्त अन्दर जवे दरया ।।
तु खुद विनगर कजी खशखाश चदी ।
मगर अन्दर बूते खुद विखन्दी ।।

: अनुवाद :

नौ नील कँगूरों की तुलना में पृथ्वी समुद्र में अफीम के वीज की तरह है।

तुम अच्छी तरह कल्पना कर सकते हो कि तुम इस अफीम के वीज के कितने छोटे कण हो ।

और तुम्हें तब अपने ऊपर हँसी आएगी।"

पुनः उनका कथन है कि :

दिगर रह गुफ्त कजरामे क्वाकिव ।
विगो ता वरचि मरकोवन्द राकिव ।।
शुनीदम मन कि हर कौकव जहानेस्त ।
जुदागाना जमीन-ओ-आस्मानेस्त ।।

. अनुवाद

"फिर उसने स्वर्गिक वस्तुओं के विषय में पूछा। मुझे वताओ किन वाहनों पर वे यात्रा कर रहे हैं ?

मैंने सुना है कि प्रत्येक ग्रह एक संसार है और उसके अपने अलग आकाश और पृथ्वी है।"

निज़ामी ने भौतिक विज्ञान के मुख्य नियम गति और स्थैर्य का भी निरूपण किया है। उनके शब्द हैं—

वले दर अक्ले हर दानिन्दये हस्त।
कि बा गरदिन्दा गरदानिन्दये हस्त॥
अज़ आ चर्खा कि गरदानद ज़ने पीर।
क्यासे चर्खे गरदूँ रा हमे गीर॥
चो गरदानद वरा दस्ते खिरदमन्द।
दरा गरदिश विमानद साअते चन्द॥

: अनुवाद

"कहो, प्रत्येक बुद्धिमान् व्यक्ति के मस्तिष्क में यह बात है कि प्रत्येक चल-वस्तु के पीछे उसका चालक है।

एक वृद्धा चर्खा चलाती है; आकाश के पहियों के भी विषय में तुम वही देख सकते हो।

जब उस परम बुद्धिमान् का हाथ किसी वस्तु को चलाता है, तब वह कुछ समय तक चलती रहती है।"

(ड) सादी

इसी निकाय को यह गौरव भी प्राप्त है कि उसने शीराज़ के मुशर्रफ़ुद्दीन मुस्लेह बिन अब्दुल्ला 'सादी' से महत्ताशाली उद्बोधन गीतों के रचयिता को जन्म दिया। उनके गीत बहुत गेय हैं। मूल अरबी में व्यक्त अनेक विचारों को उन्होंने अपने ग्रंथों में अव-

तरित किया है। उन्होंने गद्य-काव्य, गजलों और सदाचार की शिक्षाओं में अमर योगदान किया है। अपनी काव्य-शैली में उन्हें इतनी परिपूर्णता मिली कि उन्हें 'युग के अंतिम कवि' की उपाधि मिली। अपने एक उद्बोधन-गीत में वे कहते हैं :

रिहा नमी कुनद अय्याम दर किनारे मनश ।
कि दादे खुद विस्तानम व बोसा अज़ दहनश ।।
हमा कमद व गीरम कि सैदे ख़ातिरे ख़ल्क ।
वदा हमी कुनदो दर कगम वख़ेश्तनश ।।
वलेक दस्त नियारम ज़दन दरा सरे ज़ुल्फ ।
कि मबलगे दिले खलकस्त ज़ेरे हर शिकनश ।।
गुलामे कामते आ लोबतम कि वर कदे ऊ ।
बुरीदा अद लताफत चो जामा वर वदनश ।।
जि रंगो बूये तो ए सर्व-कद सीम-अंदाम ।
बिरफ्त रौनके निसरीने वागो निस्तरनश ।।
यके वहुक्मे नज़र पाय दर गुलिस्ता निह ।
कि पायमाल कुनी अर्गवानो यासमनश ।।
ख़ुशा तफरर्जे नौरूज़ ख़ासा दर शीराज़ ।
कि वर कनद दिले मर्दे मुसाफिर अज़ वतनश ।।
अजीज़े मिस्रे चमन शुद जमाले यूसफे गुल ।
सवा वशहर दर आवुर्द बूये पैरहनश ।।

शिगुफ्त नीस्त गर अज़ गैरते तो बर गुलजार ।
वगिरयद अब्रो बख़न्दद शगूफा बर चमनश ॥
दर ई रविश कि तूई गर ब मुरदा बर गुजरी ।
अजब नबाशद अगर नारा आयद अज कफनश ॥
न माद फितना दर अय्यामे शाह् जुज सादी ।
कि बर जमाले तो फितनास्त व ख़ल्क बर सुख़नश ॥

: अनुवाद :

"न तो भाग्य मुझे अपनी प्रिया को अपने वक्ष से लगाने देता है, और न उसके बंद ओठों पर एक चुंबन लेकर मुझे अपना लंबा निष्कासन भूलने देता है,

जिस जाल से वह अपने सुदूर के शिकारों को फँसाने की अभ्यस्त है,

उसे मैं चुरा लूँगा, ताकि उसे एक दिन मैं अपने पार्श्व में आकृष्ट कर सकूँ।

फिर भी मैं उसके वालों को अधिक कठोर हाथों से न सहलाऊँगा, क्योंकि उसमें असंख्य प्रेमियों के हृदय उसी तरह फँसे हैं जैसे जाल में चिड़ियाँ।

मैं उस सुन्दर रूप का दास हूँ, जो मेरी कल्पना में, एक मापक-दण्ड से सौंदयविष्टित है जैसे कि दर्जी चुस्त कपड़े सीते हैं। चांदी की शाखाओं वाले ओ सर्व वृक्ष! तुम्हारे इस रंग और सुगंध

न मेंहदी के पौधे और जंगली-सेवती के विकच पुष्प-सौरभ को लज्जित कर दिया है।

अपने नेत्रों से निर्णय करो, और सुन्दर उन्मुक्त उद्यान में प्रवेश करो,

और अपने पांवों तले चमेली तथा जूडास वृक्ष के पुष्पों को मसल दो।

नववर्ष का दिवस सुखद और उल्लासपूर्ण है—सबसे अधिक शीराज में;

यहां तक कि राहगीर अपना घर भूल जाता है और स्वेच्छया इसका कैदी बन जाता है।

उद्यानरूपी मिस्र पर, सुन्दर लाल गुलाब, यूसुफ की तरह राजा है,

और पश्चिम की वायु उसके वस्त्र का सौरभ नगर के भीतरी भाग तक लाती है,

इसपर आश्चर्य मत करो कि तुम वसंतकाल में ऐसी ईर्ष्या के पात्र हो,

कि बादल रो रहे हैं और पुष्प हँस रहे हैं—यह सब तुम्हारे कारण !

यदि मृत लोगों के ऊपर तुम्हारे वे सुन्दर और चंचल पांव चलें, तो असंभव नहीं कि तुम उसके वेष्टन से निसृत एक वाणी सुनो, इस पर आश्चर्य न करना,

हमारे शासक प्रभु के इस काल में हमारी इस भूमि में विक्षिप्तता वर्जित है,

सिवा इसके कि मैं तेरे प्रेम से सौन्दर्य विक्षिप्त हूँ, और लोग मेरे गीतों से।"[1]

एक दूसरे अवसर पर आत्मा के प्रशिक्षण तथा सदाचार के उच्चादर्शों पर बोलते हुए वह कहते हैं—

तने आदमी शरीफस्त बजाने आदमियत।
न हमी लिबास जेबास्त निशाने आदमियत॥
अगर आदमी ब चश्मस्त व दहानो गोशो बीनी।
चि मियाने नक्शे दीवार व मियाने आदमियत॥
बहकीकत आदमी बाश वगरना मुर्ग बाशद।
कि हमी सुखन बिगोयद ब जुबाने आदमियत॥
मगर आदमी न बूदी कि असीरे देव मादी।
कि फरिश्ता रह न दारद ब मकाने आदमियत॥
अगर ई दरिन्दा खूई जि तबीयतत बमीरद।
हमा उम्र ज़िन्दा बाशी ब रवाने आदमियत॥[2]

---

१ ई० जी० ब्राउन कृत फारस का साहित्यिक इतिहास, द्वि० खण्ड, पृ० ५३४

२ सादी—तय्यबात।

: अनुवाद :

"मनुष्य के शरीर में आत्मा की स्थिति होने से शरीर पवित्र हो जाता है;

स्वयं आकर्षक परिधान मानवता का प्रतीक नहीं है।

यदि नेत्र, मुख, कान और नाक के आधार पर हम मनुष्य होने का दावा करें,

तो भित्ति-चित्र और मनुष्य में क्या अन्तर रह जायगा?

वास्तव में मनुष्य बनो; क्योंकि पक्षी भी मनुष्य की बोली बोल सकता है।

क्या तुम मनुष्य नहीं जो शैतान के शिकार हो गए हो; क्योंकि मानवनिवास में देवदूत भी प्रवेश नहीं पा सकते।

यदि तुम्हारी प्रकृति का यह पशुत्व नष्ट हो जाय तो तुम अपनी आत्मा के सहारे सदैव जीते रहोगे।

(च) हाफिज

इसी निकाय के अंतर्गत हैं 'स्वर्गिक रहस्यों के व्याख्याता', या 'अदृश्य की जिह्वा', शीराज के संत कवि शम्सुद्दीन मुहम्मद 'हाफिज'। इन्होंने फ़ारसी के उद्बोधन गीत का उसकी सर्वोच्च पूर्णता तक उन्नयन किया। यह ऊँचाई तब से अब तक अन्य कोई कवि नहीं प्राप्त कर सका है। उनमें सौंदर्य के लिए गंभीर रुचि, जन्मजात वक्तृत्व और युगीन सभ्यता का गंभीर ज्ञान समन्वित थे। अन्य कवियों की अपेक्षा कहीं अधिक प्रेरणा वे 'कुरान' से पाते थे।

अपने काव्य में हाफिज ने स्वर्गिक रहस्यों तथा दार्शनिक और रहस्यवादी तथ्यों का मिश्रण उपस्थित किया है। उनके उद्बोधन गीत मधुर रूपको, ईरान के इतिहास से उद्धृत प्रसगो तथा धर्मो के इतिहास से भरे हुए हैं। बंगाल के राजा को स्तुति स्वरूप भेजे गए अपने एक उद्बोधन गीत में वे कहते हैं—

साकी हदीसे सर्वो गुलो लाला मी रवद।
वी वहस वा सुलासाय गस्साला मी रवद॥
मैं देह कि नौ उरूसे चमन हद्दे हुस्न याफ्त।
कार ई जमा ज़ि सनअते दल्लाला मी रवद॥
शक्कर शिकन शवद हमा तूतियाने हिन्द।
ज़ी कदे पारसी कि व वगाला मी रवद॥
तये मका ववीनो जमा दर सलूके शेर।
की तिफले यक शवा रहे यकसाला मी रवद॥
आ चश्मे जादुआना व आविद फरेव वी।
किश कारवाने सिह्र ज़ि दुवाला मी रवद॥
अज रह मरौ व इशवाय दुनिया कि ईं अजूज़।
मक्कारा मी नशीनदो मुहताला मी रवद॥
वादे वहार मी वजद अज़ गुलसिताने शाह।
वज़ याला वादा दर कदहे लाला मी रवद॥
हाफिज़ ज़ि शौके मजलिसे सुलतागियासे दीन।
गाफिल मशौ कि कारे तो अज़ नाला मी रवद॥

अनुवाद :

सर्व गुलाब और घटिया और मधुर जंगली अड़हुल, इनकी कथाएँ एक मुँह से दूसरे मुँह पहुँच जाती हैं।

साथी! तुम्हारी मदिरासे भरे तीन प्यालो द्वारा घुले हुए मेरे गीत प्रस्तुत कथा सुनाएँगे।

उठो! सब चरागाहों की दुलहन,
उसके पक्व सौंदर्य से आवेष्टित होकर उठो : प्याला भर दो!
मेरा यह गीत वासंती सेविकाओ के विषय में है।
सुदूर भारत की शर्कराप्रिय चिड़ियो ने,
सुन्दर बंगाल से लाई गई एक फारसी मिठाई के सिवा
अपनी रुचि की एक भी चीज न पाई।
देखो कि एक रात में रचित मेरा गीत
किस प्रकार काल और स्थान की सीमाओ को चुनौती देता है!
एक रात्रि की संतान, मेरा यह निर्भय गीत
मैदानों और पर्वत शिखरों पर अपना एक वर्ष लंबा पथ पायेगा।
और तुम, जिसकी बुद्धि 'पवित्रता' से आच्छन्न है—
तुम भी उसके नयनों का जादू समझ लोगे;
जब उन द्वारों से नील वर्ण पर्दे उठते हैं।
तब जादूगरी का यात्री-मंडल निकल पडता है।
और जब वह पुष्पित चरागाहों के बीच चलती है,
तब उसके सौंदर्य से लज्जित हो चमेली के कपोलो पर—
प्रस्वेद के ओस-बिन्दु झलक उठते हैं।

पवित्रता के पथ से न डिगना
चाहे संसार झुर्रीयुक्त बुढ़िया की तरह तुम्हें कितने ही प्रलोभन दे
जो अपने वस्त्रों में वासना छिपाए हुए है,

वह उन्हें लूट लेती है जो रुककर उसका विलाप सुनते हैं।
सीनाई से मोज़ेज तुम्हारे लिए अतुल संपदा ला रहे हैं;
समीर की तरह सुनहले बछड़े के समक्ष,

फरेब के शिकार होकर, सर मत झुकाओ।
शाह के उद्यान से वासंती वायु वह रही है,
उसके उठे हुए फूलदान में घंटिया-पुष्प
स्वर्ग प्रदत्त मदिरा विन्दु से युक्त है;

जब तक सुल्तान गयासुद्दीन[1] सुन न लें,
हाफिज, तब तक उसके दर्शन की अपनी कामना सुनाओ।
तुम्हारे घर के समीप वार्तालाप करने वाली वायु
तुम्हारा विलाप राज्य तक पहुँचा देगी।[2]

---

१ आर्थर जे० अर्बेरी कृत हाफिज की ५० कविताएँ-कैम्ब्रज यूनि० प्रेस—१९५३, पृ० १६१ [टीकाकारो के दो दल क्रमश इस गियाथ-अल-दीन को वगाल का शासक (राज्यारभ ७६९/१३६७), और हिरात का राजकुमार गियाथ-अल-दीन पीर-अली (शासन किया ७७२-९२/१३७०-८९] मानते है। यह नाम दीवान मे अन्यत्र नही आता।

२ वही, पृ० १०४।

(छ) वह्शी

इस समुदाय के एक दूसरे प्रतिनिधि हैं--किरमान के एक गाँव बाफ़क़ के वह्शी (मृ० १५८३ ई०)। वह एक अत्यंत उत्साही और भावविभोर कवि तथा प्राकृतिक सौंदर्य के सजग द्रष्टा थे। दक्षिणपूर्वी ईरान के रेगिस्तानों के किनारों पर वह रहते थे और वहीं उन्होंने अपने अत्यधिक मधुर और गेय उद्‌बोधन गीत गाए जो एक ज्वलंत प्रेम से भरे हृदय और अनर्गल आशाओं से भरे मस्तिष्क का अच्छा परिचय देते हैं। गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत का आइज़क न्यूटन द्वारा (१६४२-१७२७ ई०) पता लगाए जाने के बहुत पहले वह्शी ने न केवल धुंधले रूप में इसे खोज लिया था वरन् उन्होंने एक सुन्दर अनुच्छेद में उसका विवेचन भी किया था।[१] उन्होंने कहा था :

यके मैलस्त दर हर जर्रा रक्कास।
कशा हर ज़र्रा रा ता मरकज़े ख़ास॥
ज़ि जिस्मे आसमानी वज़ ज़मीनी।
अजी मैलस्त हर जुबिश कि वीनी॥
जनीबत दर जनीवत खैल दर खैल।
हमी मैलस्तो ईं मैलस्तो ईं मैल॥

---

१. देखो वह्शी की मसनवी, फरहाद-शीरीन, बबई।

अनुवाद

"प्रत्येक कण में एक नृत्यशील कामना है जो उसे एक विशेष केन्द्र की ओर खींचती है।

स्वर्गिक तथा पृथ्वी की प्रत्येक वस्तु की प्रत्येक गतिविधि, जिसे तुम देखते हो, इसी काम के कारण है।

प्रत्येक वृन्द और जनसमुदाय में,

केवल एक यही कामना, एक मात्र यही कामना विद्यमान है।

(ज) जामी

अन्त में है, उसी संप्रदाय से उत्पन्न विश्व-कोष-ज्ञान-समन्वित महाकवि अब्दुर्रहमान 'जामी' जिन्होंने रहस्यवाद का सांप्रदायिक मतवाद से तथा इस्लामी संस्कृति के विकास की नौ सदियो के बीच पल्लवित हुए इस्लामी विद्याओ की परंपरा के विपुल भाण्डार से समन्वय किया। यद्यपि उनके स्रोत अरबी ग्रंथों तक ही सीमित रहे तथापि उन्होने अपने उस विशालकाय 'सप्तकों' में विचारोत्तेजक विषयवस्तु का एक विशाल संग्रह संकलित किया, जिसमें फारसी-काव्य की सात सुन्दर मसनवियाँ है।

इनमें से एक[1] में उन्होंने सिकंदर और ब्राह्मणों के बीच हुई एक भेंट का वर्णन किया है। इस कथा में उस वीर विजेता और

---

१ देखो खिरदनामा इस्कदरी।

शातिप्रिय भारतीय ब्राह्मणों के बीच हुआ एक संवाद है। गाधी-दर्शन के उन पूर्वजों ने सिकदर को सलाह दी कि तुम शाति और अहिंसा के पक्ष का पोषण करो।

मैं आज का व्याख्यान ब्राह्मणों के कथनों से एक उद्धरण देकर समाप्त करूँगा, क्योंकि 'ब्राह्मण' शब्द फारसी साहित्य में 'बुद्धिमान्' का पर्यायवाची माना जाता है।

सिकन्दर चो बर हिन्द लश्कर कशीद ।
ख़िरद मन्दिये बरहमाना शुनीद ॥
गरोहे ख़ुदादानो हिकमत शिनास ।
बुरीदा ज़ि गीती उमीदो हिरास ॥
न्यामद अजेशा कसे सूये ऊ ।
जि तकसीरे शा गर्म शुद ख़ूये ऊ ॥
बर अगेख़्त लशकर पये कहरे शा ।
श्ताबा रुख़ आवुर्द दर शहरे शा ॥
चो जा बरहमाना ख़बर याफ्तन्द ।
व तदबीर आ कार बरताफ्तद ॥
रसीदद पेशश दर अस्नाय राह ।
व अजर्श रसान्दन्द कैं पादशाह ॥
गरोहे फकीरेम हिकमत पयोह ।
चि तावी रुखे मरहमत जी गोह ॥

न मारा सरे सुलह ने तावे जग ।
दरी कार बिह गर नुमाई दिरग ।।

न दारेम जुज गजे हिकमत मता ।
न शायद ज़ि कस बर सरे आ निजा ।।

अगर गजे हिकमत हमी बायदत ।
अजुज़ कुजकावी नमी शायदत ।।

बुवद कारशे गज ताअतवरी ।
न किशवर कुशाई ओ गारतगरी ।।

सिकन्दर चो बिशुनीद ईं अर्जे हाल ।
ज़ि लशकर कशीदन कशीद इनफआल ।।

व आ चन्द तन राहे जा बर गरिफ्त ।
दिल अज़ मुल्को माले जहा बर गरिफ्त ।।

पस अज़ कतओ हामू व कोहे रसीद ।
दर ऊ कदा हर सू वसे गार दीद ।।

गरोहे निशस्ता दरा गारहा ।
फिरो शुस्ता दस्त अज़ हमा कारहा ।।

रिदा ओ अज़ार अज गिया बाफ्ता ।
अमामा व फर्क अज़ गिया ताफ्ता ।।

कुशादद वाहम जुबानें खिताब ।
वसे शुद जि हर सू सवालो जवाब ॥
वसा रम्ज़े हिकमत कि परदाख़तद ।
वसा सिर्रे मुश्किल कि हल साख्तन्द ॥

चो आमद वसर मजलिसे गुफ्तगू ।
सिकन्दर वरा हाज़रा कर्द रु ॥
कि हर च अज़ जहा एहत्याजे शुमास्त ।
विख़ाहेद अज़ मन कि यकसर रवास्त ॥

व गुफ्तद मारा दरी ख़ाकदा ।
नबायद वजुज़ हस्तिये जाविदा ॥
ब गुफ्ता कि ईं नीस्त मकदूरे मन ।
बज़ी हर्फ ख़ालीस्त मनशूरे मन ॥

बगुफ्तद चू दानी ई राज़ रा ।
चरा वन्दाई शहवतो आज़ रा ॥
पये मुल्क ता चद खूँ रेखतन ।
वहर किशवरे लशकर अगेख्तन ॥

गरिफ्तम कि गीती हमा आने तुस्त ।
जहाँ सर वसर ज़ेरे फरमाने तुस्त ॥
चि हासिल चो मी वायद आखिर गुजाश्त ।
वदिल तुख्मे अदोह जावीद काश्त ॥

: अनुवाद

"जब सिकंदर ने भारत पर आक्रमण किया तब उसने ब्राह्मणों के ज्ञान के विषय में सुना,

कि वे पवित्र तथा विद्वान् व्यक्तियों का एक ऐसा समुदाय है जो अपने हृदयों से समस्त संसारी आशाओं और भीतियों को निष्कासित कर चुके हैं।

उनमें से कोई भी सिकंदर से मिलने न आया जो उनकी इस उपेक्षा से कुपित था।

उसने उन्हें दण्ड देने के लिए अपनी सेनाएँ इकट्ठी कीं और उनके नगर की ओर बढ़ चला।

जब ब्राह्मणों को यह विदित हुआ, तब उन्होंने शीघ्र एक योजना बनाई।

वे उससे मार्ग में मिले और बोले, 'हे राजा!

'हम निर्धन व्यक्ति हैं और अध्ययन तथा ज्ञानार्जन में लगे रहते हैं, तुम हमें अपनी कृपा से क्यों वंचित करते हो?

'न तो हमारे पास शांति के लिए अवकाश है, और न युद्ध के लिए शक्ति; बेहतर होगा कि आप हमारे विरुद्ध अपने जल्दबाजी के कार्य पर शांतिपूर्वक विचार करें।

'हमारे पास ज्ञान की संपदा के सिवा अन्य कोई धन नहीं, परंतु उसी लिए तो किसी को हमसे न लड़ना चाहिए।'

'यदि तुम्हें ज्ञान-कोष की आवश्यकता हो, तो समझ लो कि सिवा कठिन खोज के द्वारा वह दुष्प्राप्य है।'

'ज्ञान का खोजी तो विनम्र होता है न कि देशों पर आक्रमण करता और उन्हें लूटता है।'

जब सिकंदर ने यह प्रार्थना सुनी तब वह अपने आक्रमण (के विषय) पर लज्जित हुआ।

उसने अपना धन और राज्य त्याग कर जीवन के मार्ग पर उनमें से कुछ का अनुगमन किया,

रेगिस्तान को पार करने के बाद, वे एक पर्वत के पास पहुँचे जिसमें अनेक गुफाएँ खोदी गईं।

एक जनसमुदाय सारे कार्य छोड़कर इन्हीं गुफाओं में रहता था।

वे बिनी हुई घास के कपड़े तथा साफे पहने थे।

उनमें सबने साथ ही सिकंदर को संबोधित किया और प्रश्नोत्तरों का प्रचुर परिमाण में विनिमय हुआ।

ज्ञान के अनेक रहस्य बताए गए और अनेक कठिन समस्याएँ हल की गईं।

जब सभा समाप्त होने को हुई तब सिकंदर ने श्रोताओं को संबोधित कर कहा :

'आप लोग मुझसे सांसारिक आवश्यकता की कोई भी वस्तु माँग सकते हैं।'

उन्होने उत्तर दिया, 'इस व्यर्थता के स्थान (संसार) में हमें एक अनन्त जीवन पाने की कामना के सिवा और कोई कामना नही।'

सिकन्दर ने कहा, "यह मेरी शक्ति के बाहर है, मेरा आज्ञापत्र इस (अमरता) शब्द से रिक्त है।'

वे बोले, 'यदि तुम इस रहस्य को जानते हो तो क्यो वासना तथा लोलुपता के शिकार बने हुए हो ?

'राज्य पाने तथा प्रत्येक देश पर आक्रमण करने के लिए कब तक तुम रक्तपात करते रहोगे ?

'मान लो कि सारा संसार तुम्हारे चरणो में नत हो और तुम्हारी आज्ञाओ का पालन करे

'इतने पर भी तुम्हें क्या प्राप्त होगा, क्योंकि अंत में, हर एक को यह संसार त्यागना होगा और अपने हृदय में अनंत शोक का बीज बोना होगा।'

———

सप्तम व्याख्यान

*

काव्य : विविध विषय

*

रूपरेखा

काव्य के रूप

मुख्य फारसी

अरबी से गृहीत या अनुकृत

अरबी के ईरानी लेखक

[१] अरबी और फारसी दोनों मे प्रचलित रूप

(क) कसीदा (स्तुति) (ख) ग़ज़ल (उद्बोधन गीत) (ग) क़तआ (वृत्त खण्ड)

[२] फारसी के निजी रूप

(घ) रुबाई (चतुष्पदी) (ङ) मसनवी (द्विपदी) (च) तर्जिआ (छंदानुगत कविताएँ)

[मिर्ज़ा ग़ालिब के कुल्लियात का एक विश्लेषण (उदाहरण स्वरूप)]

[३] आधुनिक काव्य के रूप

यूरोपीय काव्य का प्रभाव; प्रथम सुधार

[४] उपसंहार क्षमा-याचना और धन्यवाद।

काव्य के रूप

रूप और विषयवस्तु की दृष्टि से फारसी काव्य के अनेक वर्ग बनाए गए हैं। प्रत्येक वर्ग के अपने प्रतिनिधि कवि हैं जो विशेष वर्ग के 'आचार्य' माने जाते हैं।

रूप की दृष्टि से उदात्त छंदों के ६ प्रमुख प्रकार हैं। इनमें से कुछ अरबी काव्य से लिए गए हैं, जबकि ईरान में प्राचीन काल से विद्यमान कुछ दूसरे रूपों ने बाह्यतः अपनी मौलिकता बनाए रखी है। यदि बाद के युगों में अरबी काव्य में फारसी काव्य के ही छंद, या वैसे ही छंद पाए जाते हैं तो ये निश्चय ही अरबों द्वारा फारसी काव्य से लिए गए हैं। इसे न भूलना चाहिए कि अरबों का विशुद्ध और वास्तविक काव्य, जिसे विदेशी प्रभाव से मुक्त कहा जा सकता है (विशेषकर ईरान का), वह था जो इस्लाम-प्रदेश के एक शताब्दी पहले अरब प्रायद्वीप में समृद्ध रूप से विद्यमान था और उसके बाद दो शताब्दियों से अधिक तक चलता रहा। प्रथम युग अर्थात् इस्लाम-पूर्व काल के काव्य को अरबों ने 'जाहेलिय्यात काव्य' तथा द्वितीय युग के काव्य को 'मखज्रमिय्यात' और 'उमय्या काव्य' की संज्ञा प्रदान की। ये विशुद्ध अरबी प्रतिभा की उपज थे।

आठवीं शताब्दी ई० / द्वितीय शती हि० के आगे से ईरानियों ने भाषा पर इतना अच्छा अधिकार पा लिया कि न केवल वे उसमें

अपने विचार तथा मंतव्य प्रकट कर सकते थे (काव्य तथा गद्य दोनों में), वल्कि वे अरवी रचनाओं में भी अरवी लेखकों को मात दे गए। वास्तव में अरवी भाषा के व्याकरण और अलंकार-शास्त्र के संकलन का श्रेय ईरानियों को है।

तीसरी शताब्दी हि० से न केवल अरवी साहित्य (वाद में अब्वासी साहित्य के नाम से प्रसिद्ध) ने ईरानी प्रतिभाओं की सहायता से लाभ उठाया वल्कि अनजाने ही उन्होंने अपनी प्राचीन भाषा से इस नई भाषा में विचारों तथा विषयों की एक विपुल राशि स्थानांतरित कर दी।[1]

जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ चौथी शताब्दी हि० में उत्पन्न हुए फारसी काव्य के कुछ रूप अरवों से लिए गए, जब कि कुछ दूसरे रूप जो मूलतः ईरानियों ही के थे, अरवी काव्य में साथ-साथ परस्पर सहयोग से ग्रहण किए गए।

आंज के भाषण में मैं फारसी काव्य के तीन अपने निजी तथा तीन अरवों से लिए गए रूपों पर विचार-विमर्श करूँगा। प्रत्येक के लिए मैं कुछ आचार्यों का नामोल्लेख करूँगा, जो उक्त विशिष्ट रूप के प्रतिनिधि होंगे। उन सब का विस्तृत विवरण देना इन व्याख्यानों के क्षेत्र से वाहर है।

---

१. देखो—आर० ए० निकल्सन कृत 'अरवो का साहित्यिक इतिहास,' वथा सी० हुअर्ट कृत 'अरवी साहित्य'—पैरिस।

[१] अरबी और फ़ारसी दोनों मे प्रचलित रूप

(क) क़सीदा (स्तुति)—यह एक लम्बी कविता है, जिसमें तुकान्त अथवा एक ही छंद के बीस से सौ तक या अधिक पद्य रहते हैं। यह अरबी काव्य का प्राचीनतम रूप है जो कि 'जाहेलिय्यात' युग से विद्यमान है। इन कविताओं के अंतिम छंद में, जिसे 'मक़ता' कहते हैं, कवि अपने उपनाम का उल्लेख करता है।

फारसी काव्य के इस प्रकार में अनेक कवियों ने स्थायी रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। महान् कसीदा-लेखकों में प्रथम हैं बुख़ारा के 'रोदकी' (मृ० ९४१ ई०), जो अंधे कवि-संगीतज्ञ तथा 'फ़ारसी काव्य के जनक' थे। उन्हें इस शाखा में बड़ी प्रसिद्धि मिली। यही प्रथम कवि थे जिसने कलीलाह्-व-दिमनाह् (पंच-तंत्र) को एक सुन्दर मसनवी में पद्यबद्ध किया। इस मसनवी को लुप्त हुए बहुत समय बीत गया। समस्त पुस्तक के केवल ७० के लगभग छंद ही आज प्राप्य हैं।

उनके बाद, ग़ज़नवियों के अंतर्गत (१००० ई०), कसीदा-लेखक परिपूर्णता की चरम सीमा पर पहुँच गए। ग़ज़नवी दरबारों के 'उनसरी बल्ख़ी' (१०५० ई०) तथा 'फर्रुख़ी सीस्तानी' (१०वीं शती) आदि जैसे सभी कवि सुन्दर स्वरचित कसीदे छोड़ गए हैं।

काव्य का यह रूप बाद के युगों में भी यथापूर्व लोकप्रिय रहा और आधुनिक काल के कवियों का भी ध्यान इसकी ओर आकृष्ट

रहा है। इतिहास के पूरे दौरान में ईरान, अफगानिस्तान और मध्ययुगीन भारत के प्रायः हर दरबार में राजकवि (मलिक-उल-शोअरा) रहते थे। समकालीन कसीदा-लेखकों में सर्वश्रेष्ठ कवि को यह उपाधि दी जाती थी।

१२वीं शताब्दी ई० में 'अमीर मोअज्जी' (११४७ ई०) और उनके समकालीन 'अनवरी' (मृ० ११९० ई०), 'खाकानी' (मृ० ११९८ ई०) और अन्यों ने अपने कसीदों के लिए उच्च ख्याति प्राप्त की। भारत में भी 'अमीर खुसरो' (मृ० १३२५ ई०), 'हसन देहलवी' (मृ० १३३० ई०), 'अल्लामा फैजी' (१००४ हि०), 'उर्फी' (मृ० १५९१ ई०) और अंत में 'मिर्जा ग़ालिब' (मृ० १८६९ ई०) जैसे फ़ारसी काव्य के आचार्यों ने शानदार कसीदों की सृष्टि की।

पिछली शताब्दी में ईरान में कजर-युग के सबसे बड़े कसीदा-लेखक थे 'क़ाआनी' (मृ० १८५४ ई०)।

आधुनिक युग में 'मुहम्मद तकी बहार खुरासानी' (मृ० १९५१ ई०) को राजकवि की उपाधि दी गई थी और वह इसके सर्वथा उपयुक्त पात्र थे। वह एक गण्यमान्य कसीदा-लेखक भी थे।

कसीदा से दो नए प्रकार निकले। एक है गजल (उद्बोधन गीत) और दूसरा है कतआ (वृत्त-खण्ड)।

(ख) गजल—एक प्रकार का गेय और प्रेमाख्यानक छंद है जो, क़सीदा की भूमिका के रूप में व्यवहृत होता था और मूलतः

'तगजल' कहा जाता था। इस भूमिका मे कवि अपनी प्रेमिका की प्रशंसा करता या उससे वियोग पर अपना उपालंभ देता था। कभी-कभी वह प्रकृति के चित्रण जैसे रात, दिन, सूर्योदय, सूर्यास्त या वर्ष की चार ऋतुओं आदि का वर्णन भी करता था। वाद में ११ वीं शताब्दी ई० में क़सीदा के इन भूमिकात्मक लिखे गये छंदों ने स्वतंत्र रूप ग्रहण कर लिया अर्थात् ये 'ग़जल' या उद्‌बोधन गीत हो गए। इन प्रकार के गीत के लिए जिन कवियों की विशेष अभि-रुचि थी, उन्होंने शीघ्र ग़जल-लेखन में बड़ी सिद्धहस्तता प्राप्त कर ली। तव से ईरान और अफगानिस्तान में ग़जल प्रचलित है। बाद में, यह भारतवर्ष में भी उर्दू काव्य में प्रगट हुई और अब भी इस उपमहाद्वीप में काव्य का सर्वाधिक लोकप्रिय रूप है।

सक्षेप में, गजल एक छोटी कविता है जिसमें तुकांत या एक ही छद के पांच से दस तक पद्य रहते है। अंतिम पद्य में कवि अपना उपनाम वताता है। प्रारंभ में गज़ल में मुख्यतया वासना-त्मक और प्रेमात्मक विषय रहते थे, परन्तु वाद में, १३ वीं शताब्दी ई० में, इसका क्षेत्र विस्तीर्ण हुआ और इसमें आचार, रहस्य तथा सूफी-मत विषयक काव्य का भी समावेश हो गया। गजल कुछ अशों में अग्रेजी चतुर्दशपदी से मिलती-जुलती है।

दो महाकवि इस वर्ग के प्रमुख आचार्य है। वे है 'सादी' और 'हाफिज़'। ईरान और भारत के साहित्यिक इतिहास के ...

में उनके अलावा अन्य भी कई प्रख्यात ग़ज़ल-लेखक हुए। विश्व के जाज्वल्यमान साहित्यिकों में अब भी उनका उच्च स्थान है। सैकड़ों कवियों में से निम्नलिखित कुछ का ही उल्लेख यहां किया जा सकता है :

१. ख्वाजुए-किरमानी (मृ० १३४१ ई०)
२. अब्दुर्र-रहमान जामी (मृ० १४९२ ई०)
३. सायब तब्रीज़ी (मृ० १६६९ ई०)
४. उर्फी शीरानी (मृ० १५९१ ई०)
५. विसाल शीराज़ी (मृ० १८४६ ई०)
६. बदिल देहलवी (मृ० ११३४ हि०)
७. महमूद खां कारी काबुली (मृत)
८. ग़ालिब देहलवी (मृ० १८६९ ई०)
९. इकबाल लाहौरी (मृ० १९३८ ई०)

ये नाम केवल उदाहरण स्वरूप गिनाए गए हैं, क्योंकि सच तो यह है कि ग़ज़ल-लेखकों की संख्या इतनी अधिक है कि गणना के सभी प्रयत्न निष्फल होंगे।

ईरान के आधुनिक ग़ज़ल-लेखकों का भी उल्लेख यहां कर दिया जाय। वे अपनी पैतृक प्रतिभा के महान् उत्तराधिकारी हैं, और वह समुदाय हैं जो आध्यात्मिक प्रकाश की यह मशाल ऊँची रखे हुए हैं। भारतीय उप-महाद्वीप में उत्तम काव्यात्मक अभि-रुचि वाले कुछ महान् ग़ज़ल-लेखको से मिलने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है।

(ग) कतश्रा (वृत्तखण्ड)—बाद में कसीदा से निसृत दूसरा प्रकार है कतश्रा या वृत्त-खण्ड। यह गजल की तरह पांच से बीस तुक-पद्यों की एक छोटी कविता है जो तुकान्त या एक ही छंद में होती है। कवि के लिए प्रथम पद्य में तुकान्त अर्वालियों का रखना अथवा अंत में अपना उपनाम बताना आवश्यक नहीं है। कोई भी विषय—नैतिकता, सिद्धान्त, आदेश, असाधारण घटना का वर्णन, दैनदिन घटनाएँ, प्रशंसा, व्यंग, याचना या शोकगीत वृत्तखण्ड का विषय-वस्तु बन सकते हैं।

एक वृत्तखण्ड में केवल एक ही विषय रहता है और सभी पद्य तत्संबंधी होते हैं। यह प्रकार, जो कि दसवीं शताब्दी ई० से प्रचलित है, मूलतः कसीदा का ही एक भाग था।

जिन कवियों ने इस वर्ग की कविता में प्रसिद्धि प्राप्त की उनकी संख्या बहुत है। पाँचवीं शताब्दी के दिग्गज, जैसे—सनाई ग़जनवी (११५० ई०), अनवरी खुरासानी और खाकानी शेरवानी सुन्दर वृत्तखण्ड छोड़ गए हैं। परन्तु इब्न यमीन (मृ० १३२४ ई०) अपने वृत्तखण्डों के लिए विशेष प्रसिद्ध हैं और उनका संग्रह फारसी-काव्य की उदात्त रचनाओं में सन्निविष्ट है। विचार-प्रकाशन का उपयुक्त वाहन होने के कारण यह प्रकार ईरान, अफगानिस्तान और भारत में प्रचलित है। इसके आधुनिक आचार्य हैं :

१. बहार खुरासानी (खुरासान)
२. इक़बाल लाहौरी (पंजाब)

३. सुरतगर शीराजी (जीवित है--शीराज)
४. कारी काबुली (अफगानिस्तान के राजकवि)
५. खलीलुल्लाह खलीली (अफगानिस्तान)

[२] फारसी के निजी रूप

अब मैं संक्षेप में काव्य के उन तीन प्रकारों (रूपों) का वर्णन करूँगा जो वस्तुतः ईरानी हैं।

(घ) रुबाई (चतुष्पदी)—सर्वाधिक प्राचीन है दोबैती जिसका विस्तृत वर्णन मैं पहले कर चुका हूँ। उसी पद्धति पर, अर्थात् चार अर्धालियों से युक्त चतुष्पदी (रुबाई) बाद में आविष्कृत हुई। इसमें सामान्यतया रोमानी भावनाएँ, दार्शनिक या रहस्यवादी विषय, अथवा दैनंदिन की समस्याए वर्णित रहती हैं। रुबाई अब भी प्रचलित है तथा ईरान, अफगानिस्तान और भारतवर्ष में ऐसे कम ही कवि होंगे जिन्होंने रुबाई न लिखी हो। अरबों ने कुछ समय बाद ईरानियों से रुबाई ली।

सभी रुबाइयों का छंद एक ही है और उनकी प्रथम, द्वितीय तथा चतुर्थ अर्धालियाँ परस्पर तुकान्त होती हैं। चूंकि उनमें कवि का उपनाम उल्लिखित होना आवश्यक नही, अत. संप्रति विद्यमान सहस्रों फारसी रुबाइयों के सही रचयिताओं का नाम निश्चयपूर्वक ज्ञात नहीं है। फलतः ये किसी भी प्रसिद्ध रुबाई-लेखक की मान ली जाती है।

न केवल ईराम बल्कि समस्त संसार में जिस कवि ने इस क्षेत्र

में सर्वाधिक ख्याति पाई है वह है महान् दार्शनिक गणितज्ञ 'उमर खय्याम'। उसकी रुबाइयों का अनुवाद विश्व की प्रायः सभी बड़ी भाषाओं में हो चुका है। खय्याम का परिचय देने की जरूरत नही क्योंकि आपने पहले ही उसके विषय में बहुत कुछ सुन रखा है।

इस नगर (दिल्ली) के एक महान् रुबाई-लेखक 'सरमद' का नामोल्लेख करना अत्यंत समीचीन होगा (मृ० १०७१ हि०)। जिन्हे औरंगजेब के शासन-काल में नास्तिकता के आरोप में सूली पर चढ़ा दिया गया था और जो 'जामा मस्जिद' के समीप गड़े हुए हं। अपनी भावप्रवण ऊष्मा के कारण उनकी रुबाइयाँ विशेष लोकप्रिय हैं।

(ङ) मसनवी (द्विपदी)—ईरानियो के विशिष्ट काव्य का एक दूसरा प्रकार है—'मथनवी' (मसनवी या द्विपदी)। इसकी दो अर्धालियाँ परस्पर तुकान्त होती है। इसकी लंबाई की कोई सीम निर्धारित नहीं है और इसमें आदि से अन्त तक एक ही छद रहता है। कवि को स्वतंत्रता है कि वह या तो सात छदो की एक मसनवी लिखे या वह इसे सात हजार तक बढा दे। मसनवी के लिए विषय निर्वाचित करने में भी कवि पूर्णतः स्वतत्र है। विषय चाहे ऐतिहासिक, पौराणिक, दार्शनिक, सदाचार सबधी, रहस्यवादी या धार्मिक हो।

विद्यमान फारसी मसनवियों में सर्वश्रेष्ठ और सर्वाधिक प्राचीन है फिरदौसी का 'शाहनामा'। विशालकाय मसनवियो में इसके बाद असदी तूसी (मृ० ११वीं सदी) का 'गरशास्पनामा' है।

इन दो दिग्गजों के बहुत समय बाद तक फिरदौसी की शैली की अनुकृति पर बहरे-तक़ारब में मसनवी में अनेक महाकाव्य रचे गए, जिनमें अधिकतर तत्कालीन राजाओं के सैनिक पराक्रमों का स्तवन रहता था।

तदनन्तर दार्शनिक तथा रहस्यवादी मसनवियां आती हैं, उनमें सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं :

१. मसनवी सैकलुल अर्वाह्, जिसके रचयिता थे महान् रहस्यवादी कवि जलालुद्दीन रूमी। यह मसनवी इतनी अधिक विश्रुत है कि इसी को मसनवी समझा जाने लगा है।

२. हदीक़तुल–हक़ीक़त, रचयिता—सनाई ग़ज़नवी।

३. अत्तार (मृ० १२३० ई०) की 'पक्षियों की सभा' नामक रूपकात्मक मसनवी (मनतकुत तैर)।

४. निज़ामी की स्वतंत्र नामों वाली पांच मसनवियां, जिनमें से प्रत्येक की वस्तु एक पृथक् रहस्यवादी, पौराणिक या रोमानी विषय है। ये हैं : बहरामनामा, खुसरो-शीरीन, लैला-मजनू, मख़ज़न-उल-असरार, इस्कंदरनामा।

५. इन्हीं की अनुकृति पर अमीर खुसरो ने वैसी ही पांच मसनवियां लिखीं जो सर्वविदित हैं।

६. जामी की सात मसनवियां।

'इक़बाल' लाहौरी की असरारे-खुदी, रमूज़े-बेखुदी, ज़बूरे-अजम,

अर्मुग़ाने-हिजाज़, आदि कुछ कृतियों में सुन्दर मसनवियां हैं जो इस उप-महाद्वीप में बहुत प्रशसित हैं।

(च) तर्जिआत, आदि (छंदानुगत कविताएँ)—इसके बाद हैं छंदानुगत कविताएँ अर्थात् 'अशआर अदवारी'। इस प्रकार की कविता के सभी पद्य एक ही छंद में होते हैं परंतु प्रत्येक पद्य का तुक विभिन्न होता है। जब टेक स्वरूप वही पद्य प्रत्येक छद के अंत में दुहराया जाता है तब वह कविता 'तर्जियाबंद' कहलाती है। फारसी-काव्य में इस वर्ग की दो कविताएँ बहुत प्रसिद्ध हैं। उनमें एक के रचयिता हैं 'सादी' और दूसरी के 'हातिफ' (मृ० १७८४ ई०)।

यदि, किसी छंदानुगत कविता के अंतिम पद्य में पूर्ववर्ती अथवा परवर्ती तुकों से भिन्न अपना स्वतंत्र तुक है, तो वह कविता तरकीब-बंद कहलाती है। ईरान में यह पद्धति अब भी प्रचलित है और बहार ख़ुरासानी (मृ० १९५१ ई०), वहीद दस्तगर्दी (मृ० १९३९ ई०), शोरीदा शीराज़ी (१९२५) जैसे प्रमुख कवियों ने, जिन्होंने काव्य के अन्य प्रकारों में मूल्यवान् रचनाएँ प्रदान की हैं, इस पद्धति पर भी उच्च कोटि की अनेक कविताएँ लिखी हैं।

उपर्युक्त वर्गों के लिए विभिन्न कवियों से उदाहरण उद्धृत करने के बजाय मैंने एक ही कवि की कृतियों का विश्लेषण करना उचित समझा और इस प्रयोजन के लिए मैंने मिर्ज़ा ग़ालिब का दीवान चुना है जिसमें प्रत्येक वर्ग के सुन्दर उदाहरण प्राप्य हैं। नवल-

किशोर प्रेस, लखनऊ द्वारा १६२५ में प्रकाशित उनकी 'कुल्लियात' आप देख सकते हैं। उनकी रचनाएँ जिस प्रकार कुल्लियात में हैं उसे देखते हुए उनका वर्गकरण निम्नलिखित ढग से किया जा सकता है :

१. वृत्तखण्ड	पृ० ११–५२
२. तर्जीग्रात कविताएँ	पृ० ४३–६८
३. मसनवियाँ	पृ० ६६–१६०
४. कसीदे	पृ० १६१–३२६
५. गजलें	पृ० ३३०–५००
६. रुबाइयाँ	पृ० ५०१–५१४

आप ईरान, अफगानिस्तान और भारतवर्ष के अन्य सभी कवियों की कृतियों का विश्लेषण इसी पद्धति से कर सकते हैं और काव्य के विभिन्न वर्गों का पता लगा सकते हैं। चूंकि इन देशों में सभी उदात्त कवियों की रचनाएँ उपर्युक्त ६ वर्गों में बाँटी जाती है अत. उल्लिखित विभिन्न प्रकारों का अध्ययन बहुत सुगम हो जाता है।

३ आधुनिक काव्य के रूप

ईरान के आधुनिक कवियो ने योरपीय रचनाओं की अनुकृति पर अनेक नए प्रकारों की सृष्टि की है और उन्होने उनमें अपनी रुचि तथा प्रतिभा प्रदर्शित की है। अभी इन प्रकारों को सही ढंग से निरूपित करना अथवा विशेष नाम प्रदान करना कठिन है। तथापि इतना निश्चित है कि कुछ नवनिर्मित संगीतात्मक छंदो में गीत लिखे जा रहे हैं जिनमें कि तुक का पालन लगातार एक प्रकार से नहीं

होता। कभी-कभी सभी विषम अर्धालियाँ एक ही तुक की होती हं, जब कि सम-अर्धालियो का तुक पृथक् होता है।

एक आधुनिक आचार्य, अली अकबर देहखुदा,[1] सभवतः प्रथम कवि है जिन्होंने फारसी काव्य में नए प्रकार प्रविष्ट किए। ४५ वर्ष पहले, १९०९ में, ईरान में राजनीतिक क्रान्ति के आरंभ में, उन्होंने अपने एक ऐसे मित्र की मृत्यु पर शोक-गीत लिखा जो वैधानिक आदोलन के भक्त थे और उस सघर्ष में शहीद हुए थे। यह शोकगीत स्विट्जरलैण्ड में लिखा गया था और इसने आधुनिक फारसी काव्य में एक नया अध्याय खोला। इसमें पांच छन्द है, जिनमें से एक यहाँ उदाहरण स्वरूप उद्धृत है :

ए मुर्गे सहर चो ईं शबे तार।
विगुज़ाश्त ज़ि सर स्यािहकारी॥
वज़ नफ़हाय रूह बख्श असहार।
रफ्त अज़ सरे खुफ्तगा खुमारी॥
विगशूद गिरह ज़ि ज़ुल्फे ज़रतार।
महबूबाय नीलगूँ अमारी॥
यज़दा बकमाल शुद नमूदार।
व एहरीमने ज़िश्त खू हिसारी॥
याद आर ज़ि शमा मुर्दा याद आर

---

१ हमे खेद है कि आचार्य अली अकबर फरवरी १९५६ में ससार से प्रस्थान कर गये—(अनुवादक)।

: अनुवाद :

ओ प्रातःकालीन पक्षी, जब यह तमिस्र रात अपने काले कारना एक ओर रख देती है,

और, प्रभात के जीवनप्रद उदय पर, याचित निद्रा सोये हुओं के सर से चली जाती है,

और गहन नील पुँज पर आसक्त प्रिया अपने सुनहले केशगुच्छ खोल देती है,

और पूर्णता में ईश्वर व्यक्त हो उठता है, जब कि दुस्स्वभाव अह्रिमन अपने गढ़ में चला जाता है,

उस समय उस बुझते दीप को स्मरण करो![1]

दुर्भाग्य से समय अनुमति नहीं देता—कि मैं आधुनिक फारसी काव्य पर विशद विवेचन दूँ। मौलिकता तथा विषय-नावीन्य की दृष्टि से, और काव्य-रूपों में सुधार की दृष्टि से अनेक परिवर्तन हुए हैं। जिन्हें इस विषय में रुचि हो वे निम्नलिखित पुस्तकें देख सकते हैं :

(१) फारस का साहित्यिक इतिहास, चतुर्थ खण्ड; ई० जी० ब्राउन।

(२) सखुनवराने-ईरान; डा० मुहम्मद इसहाक

(३) आधुनिक फारसी काव्य : ,,

(४) अदबियाते-मुआसिर : स्व० रशीद यासिमी

---

१. आधुनिक फारसी-काव्य—डॉ० एम० इसहाक—पृ० १०६

[४] उपसंहार

फारसी साहित्य पर मेरी व्याख्यान-माला यहाँ समाप्त होती है। मुझे बहुत खेद है कि मैं पहले के कार्यक्रम का अनुवर्तन न कर सका जिसमें अनेक विषय सन्निविष्ट थे। मैं गद्य और काव्य में इतना अधिक लीन हो गया कि अन्य विषयों के साथ उचित न्याय न हो सका। सादी के गुलिस्ताँ में एक कहानी है जो यहाँ मुझ पर लागू होती है। वह यों है :

यके अज साहिबदिला सर बजेबे मराकबा फिरो बुर्दा बूद व दर बह्रे मुकाश्फा मुस्तगरिक शुदा। हाले कि अजी हालत बाज़ आमद यके अज मुहिब्बा गुफ्त अजी बुस्ता कि बूदी तुहफा करामत कुन गुफता बखातिर दाश्तम कि अगर बदरख्ते गुल बिरसम दामने पुर कुनम हदियाय असहाब रा। चू बरसीदम बूये गुलम चुना मस्त कर्द कि दामनम अज़ दस्त बिरफ्त।

अनुवाद .

"एक महात्मा समाधिस्थ हुए और ईश्वर दर्शन के समुद्र में प्रवाहित हो गए। जब वह अपनी सामान्य स्थिति में आए तब उनके एक मित्र ने पूछा कि आप मेरे लिए उस उद्यान से कौन-सी अच्छी भेंट लाए हैं। उन्होंने उत्तर दिया कि मैंने सोचा था कि यदि गुलाब के वृक्ष तक पहुँच जाऊँगा तो अपना आँचल फूलों से भर लूँगा और वही अपने मित्रों को उपहार में दूँगा। परंतु जब

मैं वस्तुतः वहाँ पहुँच गया तब गुलाब के फूलों ने मुझे इतना बेसुध कर दिया कि आँचल मेरे हाथों से खिसक गया।'[1]

फलस्वरूप मेरे पास कोई विकल्प न रह गया सिवा इसके कि शेष विषयों—दर्शन, धर्म, सूफी-मत, और कला को किसी अन्य उपयुक्त अवसर तक के लिए छोड़ दूँ।

मुझे अब अधिक नहीं कहना है, अतः इन व्याख्यानों के आयोजन में अनेक कष्ट उठाने के लिए, विश्वविद्यालय के अधिकारियों को विशेष कर मोहक व्यक्तित्व 'वाइस चांसलर' (उपकुलपति) महोदय और फैकल्टी ऑफ आर्ट्स के दयालु अध्यक्ष को मैं हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

मैं श्रोतामण्डल के सदस्यों का भी आभारी हूँ, जिन्होंने मेरे क्षुद्र भाषणों को सुनने के लिए अपना अमूल्य समय दिया। वस्तुतः वे ही मेरी प्रेरणा तथा प्रोत्साहन के सच्चे स्रोत रहे हैं क्योंकि फ़ारसी कहावत है कि—

मुस्तमे साहिब सुखन रा बर सरे शौक आवरद।

अर्थात्

"श्रोता ने वक्ता के उत्साह को प्रज्वलित कर दिया!"

—:o:—

---

१. सादी रचित गुलिस्तान—करीब सस्करण, तेहरान पृ० ४